विषय-सूची

अध्याय		पृष्ठ
1.	भाषा का आधार एवं प्रकृति	1-4
2.	देवनागरी भाषा	5-9
3.	हिन्दी भाषा का स्वरूप एवं महत्व	10-15
4.	मातृभाषा शिक्षा के उद्देश्य और सिद्धान्त	16-20
5.	कविता	21-25
6.	कहानी	26-28
7.	उच्चारण शिक्षा	29-35
8.	व्याकरण शिक्षा	36-39
9.	अक्षर विन्यास	40-47
10.	गद्य	48-51
11.	राजभाषा	52-55
12.	राष्ट्रभाषा	56-58
13.	हिन्दी भाषा का शब्द भण्डार	59-61
14.	हिन्दी भाषा का मानकीकरण	62-69
15.	मुहावरे	70-72
16.	लोकोक्तियाँ	73-77
17.	अनेक शब्दों के स्थान पर एक शब्द का प्रयोग	78-80
18.	पर्यायवाची शब्द	81-82
19.	विलोम शब्द	83-85
20.	वर्तनी विचार	86-87
21.	तत्सम और तद्भद शब्द	88
22.	रचना एवं रचनाकार	89-92
23.	कवियों की उक्तियाँ	93-95
24.	अलंकार	96-100

पाठ्यक्रम

FOUNDATION COURSE IN HINDI

H–302

भाषा, हिन्दी भाषा का स्वरूप, देवनागरी भाषा का ज्ञान, भाषा का महत्व, शिक्षा के क्षेत्र में मातृभाषा के उद्देश्य एवं सिद्धान्त।

कविता एवं काव्य, कहानी, कहानी के उद्देश्य एवं सिद्धान्त, शुद्ध उच्चारण तथा उसके महत्व, वर्तनी, व्याकरण, व्याकरण के नियम एवं प्रकार, स्वर एवं गद्य के उद्देश्य एवं सिद्धान्त, गद्य–शिक्षण ज्ञान, राज भाषा एवं राजभाषा के नियम, राष्ट्र भाषा, स्वतंत्रता संघर्ष में राष्ट्र भाषा का योगदान, हिन्दी भाषा तथा उसका गठन, हिन्दी भाषा का मानकीकरण, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, अनेक शब्दों के लिए एक ही शब्द का प्रयोग, पर्यायवाची शब्द, विलोम शब्द, वर्तनी–विचार, तत्सम एवं तद्भव शब्द, उक्तियाँ एवं रचना, रचनाकार अलंकार।

अध्याय

1

भाषा का आधार एवं प्रकृति

भाषा की संरचना

- उद्देश्य
- भूमिका
- भाषा की परिभाषा
- भाषा के आधार
- भाषा की विशेषताएँ एवं प्रकृति
- भाषा की सामान्य विशेषताएँ

भाषा के उद्देश्य

- भाषा के स्वरूप एवं उसके विविध रूपों का परिचय।
- भाषा की व्यापकता एवं विविधता से परिचय कराना।
- भाषा की प्रकृति एवं विशेषताएँ।
- संविधान एवं भारतीय परिवेश में भाषा का महत्त्व।

1.1 भूमिका

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है अत: समाज में रहने के लिए उसे विचार-विनिमय की आवश्यकता होती है। इस विचार-विनिमय का सर्वोत्तम, सभ्य एवं सुगम साधन भाषा है। भाषा ही वह साधन है जिसके माध्यम से मनुष्य अपनी बात दूसरे से कह सकता है। यह उसके भावो व विचारो के प्रकटीकरण का साधन है। भाषा का आविष्कार मनुष्य की अद्‌भुत मेधा का परिचायक है। जब हम विचार-विनिमय की बात करते हैं तो हमारा आशय ध्वनियों से निर्मित सार्थक शब्दों से होता है। कुछ लोग सड़कों पर अंकित संकेत चिह्नों, झंडी आदि से दिये गये संकेतों को भी भाषा के अन्तर्गत सम्मिलित करते हैं। किन्तु साधारणत: भाषा का इतना विस्तृत अर्थ नहीं लिया जाता।

अत: कहा जा सकता है कि जिस वार्तालाप या लेख के माध्यम से अपने विचारों को प्रकट किया जाता है, वही भाषा है, अर्थात् भाषा के उच्चरित एवं लिखित दो रूप है। कहा जा सकता है कि भाषा सार्थक ध्वनि प्रतीकों की ऐसी व्यवस्था है जिसके माध्यम से भाषा को बोलने या सुनने वाले परस्पर विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। विचारों का यह आदान-प्रदान मौखिक या लिखित दोनों ही प्रकार से कर सकते हैं।

1.2 भाषा की परिभाषा

मनुष्य अपने भावों, विचारों एवं अनुभूतियों को भली-भाँति केवल ध्वनि संकेतों के माध्यम से ही अभिव्यक्त करता है। संकेतों को अशाब्दिक भाषा और ध्वनि संकेतों को **शाब्दिक भाषा** कहते हैं। "भाषा वह साधन तथा माध्यम है जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार, भाव तथा इच्छाओं की अभिव्यक्ति करता है।"

सुमित्रानन्दन पन्त के अनुसार–"भाषा संसार का नादमय चित्र है, ध्वनिमय स्वरूप है, यह विश्व की हृदयतंत्री की झंकार है, जिसके स्वर में अभिव्यक्ति होती है।"

रामचन्द्र वर्मा–"मुख से उच्चरित होने वाले शब्दों और वाक्यों आदि का वह समूह जिसके द्वारा मन की बात बतलाई जाती है, भाषा कहलाती है।"

काव्यादर्श के अनुसार–"यदि शब्द रूपी ज्योति से यह संसार प्रदीप्त न होता, तब यह समस्त संसार अन्धकारमय हो जाता।"

बाबूराम सक्सेना के अनुसार–"भाषा से तात्पर्य विचारों एवं भावों को अभिव्यक्ति प्रमुख रूप से स्रोत, ग्राह्य ध्वनि चिह्नों से प्रमाणित होता है। गौण रूप से दर्शन संकेत अथवा स्पर्श द्वारा ग्राह्य लेख, मुद्रण आदि से है।"

प्लेटो के अनुसार–"विचार आत्मा की मूक या अध्वन्यात्मक बातचीत है, परन्तु वही जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।"

भोलानाथ तिवारी के अनुसार–"भाषा सुनिश्चित प्रयत्न के फलस्वरूप मनुष्य के मुख या वाणी से निःसृत वह सार्थक ध्वनि समष्टि है, जिसका विश्लेषण और अध्ययन किया जाता है।"

भाषा के प्रमुख तत्व, ध्वनि, संकेत तथा चिह्न होते हैं। परन्तु विशेष रूप से शब्द और सार्थक शब्द समूह ही इसमें सम्मिलित किये जाते हैं।

1.3 भाषा के आधार

भाषा एक व्यापक क्षेत्र है। भाषा की व्यापकता के साथ-साथ उसकी प्रकृति संबंधी विविधता भी व्यापक है। इस व्यापकता के अनेक आधार हैं—

(अ) मनोवैज्ञानिक आधार–भावों और विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम भाषा है, जिसका सम्बन्ध मनोदशा से होता है। मन में उत्पन्न क्रिया तथा प्रतिक्रिया ध्वनियों के रूप में प्रकट होने पर भाषा का जन्म होता है। भाषा, उत्तेजना, प्रतिक्रिया, ध्वनियों की शृंखला है।

(ब) सांस्कृतिक आधार–भाषा का परिमार्जन रूप संस्कृति पर आधारित होता है। संस्कृति का विकास अथवा अवनति उसकी भाषा और साहित्य के विकास या अवनति के साथ होता है। सामाजिक कार्यों और गतिविधियों से ही संस्कृति का जन्म होता है। भाषा सम्पूर्ण संस्कृति के आचरण का आधार होती है। भाषा ही समुदाय के निर्माण का मूल आधार है।

(स) भौतिक आधार–भाषा के प्रमुख तत्व—ध्वनि तथा अभिव्यक्ति-मुख के अवयवों की सहायता से ध्वनियाँ उत्पन्न होती है। भाषा ध्वनि संकेतों का समूह है। भाषा के प्राकट्य और विकास का श्रेय मनुष्य की विशिष्ट शारीरिक एवं मानसिक रचना को जाता है। शारीरिक रचना से ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं और मानसिक रचना से भाव, विचार तथा संवेग उत्पन्न होते हैं।

(द) सामाजिक आधार–भाषा एक सामाजिक क्रिया है तथा मानवीय सम्बन्धों का आधार भाषा ही होती है। सामाजिक रचना तथा समाज में विचार-विनिमय की आवश्यकता ने भाषा को जन्म दिया। यही कारण है कि विभिन्न स्थानों, क्षेत्रों एवं युगों में उत्पन्न भाषाओं में भिन्नता एवं विविधता पाई जाती है।

1.4 भाषा की विशेषताएँ एवं प्रकृति

भाषा की प्रमुख विशेषता इस प्रकार है—

(1) भाषा मानव की कलाकृति है, जिसके प्रमुख कौशल बोलना, लिखना, पढ़ना एवं सुनना है।

(2) भाषा मानव मण्डल का ध्वनिमय स्वरूप है जिससे भावों, विचारों तथा संवेगों की अभिव्यक्ति होती है।

(3) भाषा अभिव्यक्ति की दृष्टि से उच्चारण की सीमित ध्वनियों का संगठन है।

(4) ध्वनिमय शब्दों, संकेतों तथा चिह्नों द्वारा भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति ही भाषा है।

(5) भाषा का मूल तत्व ध्वनि है। प्रत्येक भाषा की कुछ मूल ध्वनियाँ मान्य होती हैं और उनकी एक मान्य व्यवस्था होती है तथा ध्वनियाँ मिलकर शब्दों की संरचना करती हैं।

(6) भाषा मौखिक तथा लिखित प्रतीकों, शब्दों, संकेतों व चिह्नों की व्यवस्था है।

(7) भाषा एक माध्यम है जिसके द्वारा मानव-समाज एवं संस्कृति के विचारों एवं कार्यों का सम्प्रेषण किया जाता है।

(8) भाषा से तात्पर्य विचारों, भावों एवं संवेगों की अभिव्यक्ति प्रमुख रूप से स्रोत, ग्राह्य ध्वनि चिह्नों एवं संकेतों से करना है।

(9) भाषा के प्रमुख तत्व ध्वनियाँ, संकेत चिह्न तथा व्याकरण होते हैं। भाषा के अन्तर्गत सार्थक शब्द-समूह को सम्मिलित किया जाता है।

भाषा की सामान्य विशेषताएँ

(1) भाषा अर्जित सम्पत्ति –मनुष्य अपने चारों ओर के वातावरण से भाषा का अर्जन करता है। एक भारतीय बालक अंग्रेजी वातावरण में रहकर अंग्रेजी ही सीखता है। भाषा अर्जित सम्पत्ति है न कि पैतृक।

(3) भाषा सामाजिक देन–भाषा समाज के सम्पर्क से ही अर्जित हो सकती है। वास्तविकता यही है कि भाषा का जन्म समाज में होता है, उसका विकास समाज में होता है और उसका प्रयोग भी समाज में होता है।

(2) भाषा की परम्परागतता–भाषा परम्परा से चली आ रही है, व्यक्ति उसका अर्जन परम्परा एवं समाज से करता है। एक व्यक्ति उसे उत्पन्न नहीं कर सकता है वह उसमें कुछ परिवर्तन आदि कर सकता है।

(4) अनुकरण द्वारा भाषा का अर्जन–भाषा अनुकरण के सहारे अर्जित की जाती है। शिशु के समक्ष माँ पानी को 'पानी' कहती है, वह सुनता है और धीरे-धीरे स्वयं कहने का प्रयास करता है।

(5) भाषा का कोई अन्तिम स्वरूप नहीं–भाषा कभी पूर्ण नहीं होती अर्थात् यह कभी नहीं कहा जा सकता कि अमुक भाषा का अमुक रूप अन्तिम है। भाषा विभिन्न भाषाओं के शब्दों को अंगीकार कर सतत् प्रवाहमान रहती है। भाषा परिवर्तनशील विकास की प्रक्रिया है।

(6) भाषा कठिनता से सरलता की ओर अग्रसर–हमारे द्वारा टेलीविजन को केवल टी० वी० कहकर काम चला लिया जाता है। वास्तविक शब्द कष्ट साध्य होने के कारण टी० वी० कहकर कार्य सरल हो जाता है। व्याकरण में भी यही नियम लागू होता है।

(7) भाषा स्थूलता से सूक्ष्मता और अप्रौढ़ता से प्रौढ़ता की ओर जाती है–भाषा शुरू में स्थूल होती है परन्तु धीरे-धीरे वह सूक्ष्म भावों तथा विचारों के आदान-प्रदान के लिए सूक्ष्म तथा अप्रौढ़ से प्रौढ़ होती जाती है, परन्तु ये बातें प्रयोग पर निर्भर करती हैं।

उदाहरण के तौर पर एक बच्चे को उठाकर भेड़िए ने स्वयं ही उसे पाला पोसा उसकी बहुत सी आदतें भेड़िए जैसी थी, उसके मुँह से निकलने वाली ध्वनि भी भेड़िए जैसी थी।

भाषा के विविध रूप

संसार में कितनी भाषायें हैं इसका अनुमान लगाना सम्भव नहीं है। भाषाओं के विविध रूप निम्नलिखित हैं—

(क) मूल भाषा–कुछ भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार सम्पूर्ण विश्व समाज कभी एक परिवार था बाद में इस परिवार या कुटुम्ब के सदस्य विश्व के विभिन्न भागों में जा बसे। वे अपने साथ मूल परिवार की भाषा ले गए किन्तु स्थान एवं काल भेद के कारण उस मूल भाषा में अनेक प्रकार के परिवर्तन आ गये।

(ख) मातृभाषा–माता-पिता से सीखी हुई भाषा का परिष्कृत एवं परिमार्जित रूप मातृभाषा का होता है। मनुष्य को सामाजिक वातावरण में मातृभाषा वैसे ही सहज रूप से सुलभ होती है, जैसे वायु और जल। बालक माता-पिता से स्थानीय या क्षेत्रीय बोली ही सीखता है जिसका लिखने में प्रयोग नहीं होता है। बालकों को शिक्षा मातृ-भाषा के माध्यम से ही दी जानी चाहिए क्योंकि तथ्यों एवं प्रत्ययों को बोधगम्य करना सरल होता है।

(ग) बोली–बोली किसी भाषा की उपभाषा या उपभाषा की भी एक अंग-उपांग होती है। बोली का निर्माण स्थानीय भेद से भाषा में प्रयोग-भेद के वैभिन्नय से होता है। इसका व्याकरणिक रूप, उच्चारण, लिंग, वचन और वाक्य गठन आदि मानक भाषा के समान स्थिर नहीं होते। भारत में इस समय लगभग 1650 बोलियाँ हैं।

(घ) प्रादेशिक भाषा–प्रादेशिक भाषा किसी प्रदेश या राज्य के विस्तृत भू-भाग में निवास करने वाले बहुसंख्यक लोगों की भाषा होती है। इसका सामान्यत: अपनी लिपि एवं साहित्य होता है। विभिन्न राज्यों में प्रादेशिक भाषा विशेष के विकास हेतु साहित्य अकादमियों की स्थापना की गई। भारतीय संविधान के अन्तर्गत आठवी अनुसूची में निम्नांकित 22 भाषाएँ अंकित हैं—

1. असमिया 2. उड़िया 3. उर्दू 4. कन्नड़ 5. कश्मीरी 6. गुजराती 7. तमिल 8. तेलगू 9. पंजाबी 10. बंगला 11. मराठी 12. मलयालम 13. संस्कृत 14. सिन्धी 15. हिन्दी 16. बोदो 17. नेपाली 18. डोगरी 19. कोकणी 20. मैथिली 21. मणिपुरी 22. सैन्थली।

प्रत्येक राज्य अपने राजकीय कार्यों के हेतु किसी एक या अनेक अथवा हिन्दी को अंगीकार कर सकता है। हिन्दी का प्रादेशिक भाषा के रूप में जिन राज्यों में उपयोग हो रहा है, वे हैं—उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, हरियाणा और राजस्थान।

(ड़) राजभाषा–जिस भाषा का प्रयोग केन्द्रीय सरकार अपने कार्य, व्यापार व अन्य प्रदेशों के साथ सरकारी काम-काज व पत्र-व्यवहार हेतु करती है, उसे राजभाषा कहते हैं। यह भाषा देश के बहुसंख्यकों की भाषा होती है तथा देश के सभी राज्यों के लोग इसे सामान्य रूप से समझते हैं। संविधान के अनुसार भारतीय संघ राज्य की राजभाषा हिन्दी एवं लिपि देवनागरी है।

(च) सांस्कृतिक भाषा–संस्कृति किसी समाज के विश्वास, परम्पराए और लोकचार की परिचायक होती है। संस्कृति से हमें आचरण-व्यवहार व लोकाचार आदि के विषय में ज्ञान प्राप्त होता है। सांस्कृतिक भाषा संस्कारों को न केवल सूत्रबद्ध करती है वरन् उन्हें सातत्य भी प्रदान करती है। उदाहरणार्थ भारत की सांस्कृतिक भाषा संस्कृत है। हिन्दू जाति के सभी संस्कार इसी भाषा के माध्यम से सम्पन्न किये जाते हैं।

(छ) अन्तर्राष्ट्रीय भाषा–अन्तर्राष्ट्रीय भाषा वह है जिसे विश्व के विभिन्न देश आपसी काम-काज, व्यापारिक आवश्यकताओं एवं सरकारी पत्र-व्यवहार आदि के लिए प्रयोग में लाते हैं। यह भाषा विश्व के विभिन्न राष्ट्रों को एक-दूसरे के निकट लाने में कड़ी का काम करती है। आजकल अंग्रेजी को अन्तर्राष्ट्रीय भाषा होने का गौरव प्राप्त है।

निष्कर्ष—भाषा विभिन्न रूपों में निरन्तर प्रवाहमान है। भाषा के द्वारा मनुष्य प्रत्येक कार्य का सम्पादन सुगमता से कर पाता है। उसका विचार विनिमय, व्यापार व्यवहार भाषा के माध्यम से ही सम्पन्न हो पाता है। अंग्रेजी आज अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बन चुकी है, हमें प्रयास करना चाहिए कि हिन्दी भी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बन सके।

प्रश्न

1. भाषा का क्या अर्थ है ? भाषा का मानव जीवन में क्या महत्त्व है ?
2. "भाषा सुनिश्चत प्रयत्न के फलस्वरूप मनुष्य के मुख या वाणी से नि:सृत वह सार्थक ध्वनि समष्टि है, जिसका विश्लेषण और अध्ययन किया जाता है।" इस कथन की व्याख्या कीजिए।
3. भाषा की प्रकृति तथा विशेषताएँ बताइए।
4. भाषा के विविध रूपों का रूपांकन कीजिए।

❑

अध्याय

2

देवनागरी भाषा

देवनागरी भाषा की संरचना

- उद्देश्य
- भूमिका
- ब्राह्मी लिपि का उद्भव एवं विकास
- देवनागरी लिपि की विशेषताएँ
- देवनागरी लिपि के दोष
- देवनागरी लिपि में सुधार के प्रयत्न
- निष्कर्ष

देवनागरी भाषा के उद्देश्य

- देवनागरी तथा ब्राह्मी लिपि के इतिहास से परिचय।
- देवनागरी की विभिन्न विशेषताओं से परिचय।
- देवनागरी के लेखन और पाठन में व्याकरण का महत्व तथा वाचन शैली से परिचय।
- देवनागरी में किए जाने वाले सुधारों से परिचय।

1.1 भूमिका

किसी भी भाषा के दो रूप होते हैं—मौखिक और लिखित। मौखिक भाषा की अन्तिम इकाई ध्वनि होती है। प्रत्येक भाषा की कुछ अपनी विशिष्ट ध्वनियाँ होती हैं। ध्वनियों की दृष्टि से कोई भी भाषा न तो समृद्ध कही जा सकती है, न दरिद्र। लिखित भाषा की अन्तिम इकाई वर्ण है। प्रत्येक ध्वनि को लिखित रूप में अभिव्यक्त करने के लिए जो चिह्न या प्रतीक प्रयुक्त होता है, उसे वर्ण कहा जाता है। सभी वर्णों समूह का वर्णमाला कहलाता है। **जिस रूप में इन वर्णों को लिखा जाता है उसे लिपि** कहते हैं।

संसार में जो प्रसिद्ध लिपियाँ हैं, उनमें रोमन, फारसी और देवनागरी लिपि प्रमुख हैं। किसी भी लिपि को वैज्ञानिकता की कसौटी पर परखने के लिए कुछ बातें देखनी आवश्यक है, उदाहरणार्थ, अक्षरों के विभिन्न अंगों का अनुपात और रेखाओं की मोटाई व्यवस्थित है या नहीं, जो लिखा जाता है वही पढ़ा जाता है या नहीं, एक चिह्न से एक ही ध्वनि का बोध होता है या कई ध्वनियों का, एक ध्वनि के लिए सदा एक ही चिह्न रहता है या अनेक चिह्न रहते हैं तथा जिस भाषा की यह लिपि है, उसकी सभी ध्वनियों के प्रतीकों का समावेश है या नहीं।

देवनागरी लिपि इस कसौटी पर खरी उतरती है और इसलिए उपर्युक्त तीनों लिपियों में यह सर्वश्रेष्ठ है। हिन्दी पूर्णत: इसी वैज्ञानिक लिपि में लिखी जाती है।

अत: भाषा एवं लिपि दोनों में ही व्यक्त ध्वनि संकेतों का व्यवहार होता है, दोनों ही विचारों व भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम होती हैं, दोनों ही मूल रूप में ध्वनियों पर आधारित होती हैं, लेकिन दोनों में पर्याप्त

अन्तर भी है। भाषा, उच्चरित ध्वनि संकेतों के स्वरूप का नाम है, लिपि लिखित ध्वनि संकेतों के स्वरूप को कहा जाता है। भाषा, काल एवं स्थान की दृष्टि से सीमाओं में आबद्ध रहती है जबकि लिपि काल और स्थान की सीमाओं को तोड़ देती है, वह किसी भी व्यक्ति के लिखित विचारों एवं भावों को पर्याप्त समय तक सुरक्षित रखती है। भाषा का उच्चारण जिह्वा, ओष्ठ, नासिका तालु आदि से होता है जबकि लिपि के लेखन में लेखनी, छैनी, रेखाओं, चित्रों, गांठों, वर्णों आदि का योगदान रहता है। अत: यह कहा जा सकता है कि भाषा का जन्म पहले हुआ, लिपि का बाद में।

1.2 ब्राह्मी लिपि का उद्‌भव और विकास

देवनागरी लिपि की उत्पत्ति ब्राह्मी लिपि के एक रूप 'नागरी लिपि' से मानी जाती है। वैदिक संस्कृत एवं संस्कृत ब्राह्मी लिपि में लिखी जाती थी। अशोक के अधिकतर शिलालेखों में ब्राह्मी लिपि का ही प्रयोग किया गया है। पश्चिमी भारत के कुछ शिलालेखों में खरोष्ठी लिपि का भी प्रयोग किया गया है।

ईसा की चौथी शताब्दी तक ब्राह्मी लिपि का प्रचार लगभग समस्त उत्तर भारत में हो रहा था। ब्राह्मी लिपि निश्चित भारत में जन्मी लिपि है। यह मौर्यकाल में भारत की राष्ट्रीय लिपि थी। वस्तुत: ई० पू० 500 से लेकर 350 ई० तक लेखों की लिपि को सामान्यत: यही नाम दिया गया है। इसके पश्चात् इसके दो भेद हो जाते हैं—उत्तरी और दक्षिणी। उत्तरी शैली का प्रचार विन्ध्याचल के उत्तर में, और दक्षिणी का उसके दक्षिण में रहा।

ब्राह्मी लिपि के विकास का स्पष्टीकरण निम्न चार्ट की सहायता से किया स्पष्ट जा सकता है—

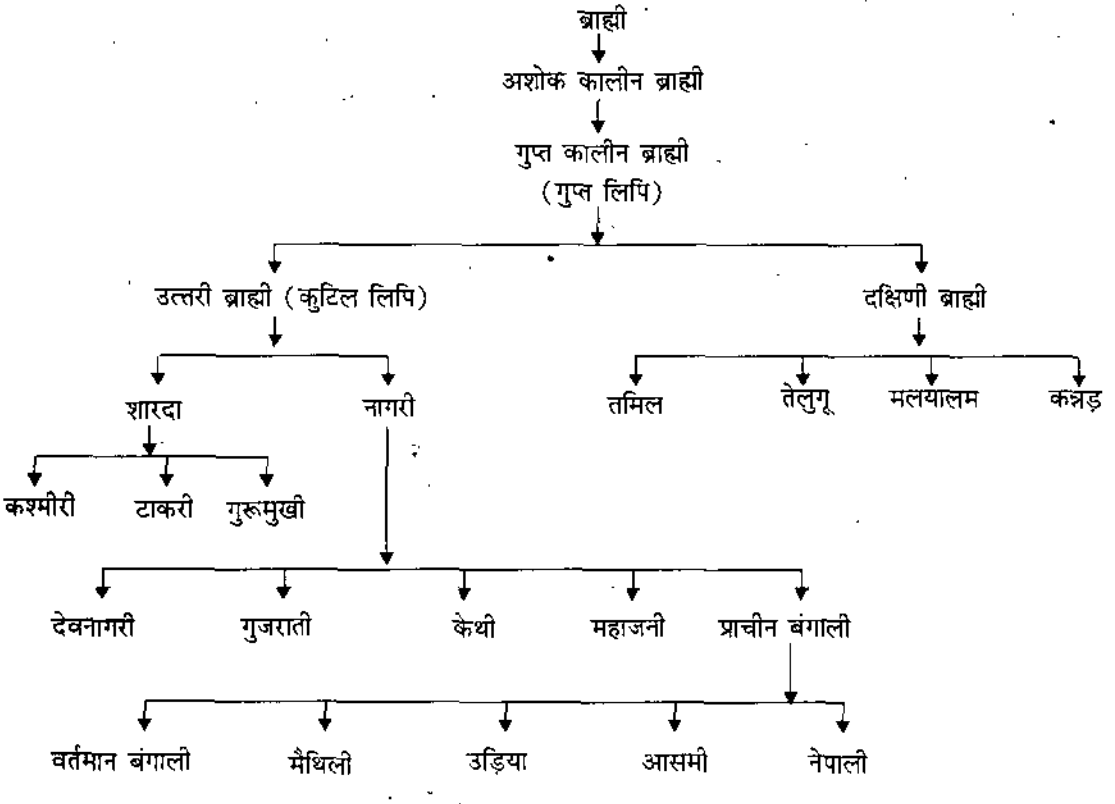

देवनागरी लिपि, प्राचीन नगरी लिपि के पश्चिमी रूप से विकसित हुई। प्राचीन अभिलेखों की लिखावट के अध्ययन से ज्ञात होता है कि भीमदेव प्रथम (1028) ई० और भीमदेव द्वितीय (1200 ई०) तथा उदय वर्मन

(1200 ई०) के अभिलेखों में प्रयुक्त लिपि वर्तमान हिन्दी के बहुत समीप है। इस प्रकार देवनागरी लिपि का प्रारम्भ 1000 से 1200 ई० तक मानना उचित है। इसके नामकरण के सम्बन्ध में प्रमुख मत निम्न हैं—

1. गुजरात के नागर ब्राह्मणों द्वारा सर्वाधिक प्रयोग होने के कारण इसका नाम नागरी पड़ा।
2. 'देवनगर' अर्थात् 'काशी' में प्रचार के कारण इसका नाम देवनागरी पड़ा।
3. कुछ विद्वानों के अनुसार प्रमुख रूप से नगरों में प्रचलित होने के कारण इसका नाम नागरी पड़ा।
4. कुछ विद्वान बौद्ध ग्रन्थ 'ललित विस्तार' में उल्लिखित 'नाग' लिपि से इसका सम्बन्ध बताते हैं।
5. डॉ० द्वारिका प्रसाद सक्सेना के अनुसार जिस तरह श्रेष्ठ वाङ्गमय वाली भाषा संस्कृत को परिमार्जित व परिष्कृत होने के कारण 'देववाणी' कहा जाता है, उसी तरह संस्कृत वाङ्गमय को लिपिबद्ध करने के कारण इस परिष्कृत एवं परिमार्जित नागरी लिपि को 'देवनागरी' नाम दिया गया है।

1.3 देवनागरी लिपि की विशेषतायें

1. देवनागरी लिपि में स्वर और व्यञ्जन को अत्यन्त वैज्ञानिक ढंग से क्रमबद्ध हैं। इसमें 14 स्वर और 35 मूल व्यञ्जन है। साथ ही तीन संयुक्त व्यंजन है—क्ष, त्र और ज्ञ। इसमें कुछ और भी आवश्यक व्यंजन समाहित कर लिए गए हैं। जैसे—ड़, ढ़ आदि।

2. डॉ० सक्सेना के मतानुसार, स्वर की ह्रस्वता और दीर्घता एक ही आकृति में तनिक सा अन्तर करके दिखाना—देवनागरी की सबसे बड़ी विशेषता है, जैसे—ह्रस्व 'अ' दीर्घ 'आ' आदि। इसके अन्तर्गत 25 व्यंजनों में से इसके पहले एवं तीसरे अलाप्राण होते हैं, दूसरे और चौथे महाप्राण होते हैं तथा पाँचवें वर्ण अनुनासिक होते हैं। अन्तिम चार व्यंजन (य, र, ल, व) अन्तस्थ हैं तथा शेष चार व्यंजन (श, ष, स, ह) ऊष्म हैं।

3. देवनागरी लिपि अत्यन्त गत्यात्मक एवं व्यावहारिक है। इसलिये इसमें आवश्यकतानुसार अनेक ध्वनि-चिह्नों का समावेश है जैसे पहले इसमें जिह्वामूलीय ध्वनियों (क, ख, ग, ज, फ) के लिये चिह्न नहीं थे परन्तु बाद में बना लिये गये। इसी प्रकार अन्य चिह्न भी बनाये गये हैं—अ, अड, एँ, * ऐसा करने से यह लिपि भारत की सभी भाषाओं को लिखने के लिये उपयोगी बन सकती है।

4. देवनागरी लिपि में 'अ' को छोड़कर शेष सभी स्वरों की ह्रस्व एवं दीर्घ मात्रायें विद्यमान हैं, जिससे व्यंजन के साथ उनका प्रयोग बड़ी सरलता से होता है।

5. देवनागरी का निर्माण उच्चारण को ध्यान में रखकर बड़े वैज्ञानिक ढंग से किया गया है। जैसे—सर्वप्रथम हम कण्ठ से बोलते हैं, तो यहाँ पर भी अ, क, ख, ग, घ, ङ कण्ठ्य ध्वनियाँ हैं। इसके उपरान्त वाग्यन्त्र में 'तालु' है तो 'इ, च, छ, ज, झ, ञ तालव्य ध्वनियाँ हैं। तदन्तर 'मूर्धा' आती है तो यहाँ भी ऋ, ट, ठ, ड, ढ, ण मूर्धन्य ध्वनियाँ रखी गई हैं। इसके बाद दन्त आते हैं और यहाँ भी उ, प, फ, ब, भ, म ओष्ठय ध्वनियाँ हैं। इस तरह वाग्यन्त्र के अनुसार ध्वनि चिन्हों का निर्माण वैज्ञानिक पद्धति पर किया गया है।

6. देवनागरी लिपि में प्रत्येक ध्वनि के लिये पृथक चिन्ह हैं जबकि अन्य लिपियों में एक ध्वनि के लिये कई चिह्न देखे जाते हैं, जैसे फारसी लिपि में 'स' ध्वनि के लिये 'सीन', 'स्वाद' आदि का प्रयोग होता है और रोमन लिपि में 'क' ध्वनि के लिये C, K, Q का प्रयोग होता है।

7. यह लिपि वर्णनात्मक है और इसके वर्णों के नाम उच्चारण के सर्वथा अनुरूप हैं। उदाहरणार्थ, फारसी लिपि में 'जीन', 'दाल' वर्ण हैं, जबकि इनका उच्चारण 'ज' और 'द' होता है। रोमन लिपि में एच (H), टी (T), एस (S) का उच्चारण 'ह', 'ट', 'स' होता है परन्तु देवनागरी लिपि के वर्णों में ऐसी बात नहीं है। यहाँ जो वर्ण जैसा है उसका उच्चारण भी वैसा ही होता है।

8. इस लिपि की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें वर्णों के उच्चारण निश्चित हैं और वे प्रत्येक स्थान पर उसी प्रकार उच्चारित किये जाते हैं।

9. इस लिपि के वर्ण अत्यन्त कलात्मक, सुन्दर एवं सुगठित ढंग से लिखे जाते हैं और इस लिपि में लिखित शब्द अपेक्षाकृत कम स्थान घेरते हैं, जैसे देवनागरी लिपि में लिखित 'रामेश्वर' की अपेक्षा रोमन लिपि में लिखित 'Rameshwara' अधिक स्थान घेरता है।

10. इस लिपि में प्रत्येक वर्ण का उच्चारण होता है, जबकि संसार की अन्य लिपियाँ ऐसी हैं, जिनमें बहुत से लिखित वर्णों का उच्चारण नहीं किया जाता, जैसे—रोमन लिपि में लिखित अंग्रेजी शब्द 'Knife' में k का उच्चारण नहीं किया जाता एवं 'Night में gh का उच्चारण नहीं होता।

1.4 देवनागरी लिपि के दोष

देवनागरी लिपि के कुछ दोष निम्नलिखित हैं—

1. इस लिपि में वर्णों की संख्या अत्यधिक है। अंग्रेजी और उर्दू लिपियों की अपेक्षा वे अधिक हैं, यद्यपि चीनी आदि भाषाओं की भाँति हजारों नही हैं। मात्राओं के अलग-अलग संकेतों के कारण भी वर्णमाला बड़ी हो गई है। इसके अतिरिक्त महाप्राण ध्वनियों और अनुनासिक ध्वनियों के विकल्प के कारण भी अन्य लिपियों से इसमें वर्णों की संख्या अधिक हो जाती है।

2. इस लिपि में मात्राओं के प्रयोग की कोई एक व्यवस्था नहीं है, कहीं कोई मात्रा ऊपर लगती है, कहीं नीचे लगती है, कहीं आगे लगती है और कहीं पीछे लगती है। जैसे—'ए' की मात्रा ऊपर लगती है (के), 'ऊ' की मात्रा नीचे लगती है (कू), इ की मात्रा वर्ण के पहले लगती है (कि) और 'ई' की मात्रा वर्ण के बाद लगती है। (की)। इससे बड़ी कठिनाई होती है।

3. इस लिपि के अन्तर्गत कभी-कभी शिरोरेखा भी भ्रम उत्पन्न कर देती है जैसे यदि 'भ' के ऊपर शीघ्रता में पूरी शिरोरेखा लग गई तो यह 'म' पढ़ा जायेगा। 'भरा' मरा हो जायेगा। यही स्थिति 'ध' और 'घ' के साथ है। 'धड़ी' 'घड़ी' बन जायेगा।

4. इस लिपि में कतिपय संयुक्ताक्षर स्वतन्त्र व्यंजन जैसे हो गये हैं और साधारण व्यक्ति उनको संयुक्ताक्षर नहीं समझता क्योंकि वे स्वतनत्र व्यंजन की तरह ही लिखे जाते हैं जैसे—क्ष, त्र, ज्ञ, श्र, ऋ। उनको (क + ष = कष) (त् + र =त्र), (ज्+ञ) = ज्यं = गय्) 'शृ' = शृ आदि के रूप में लिखा जाना चाहिये था।

5. देवनागरी लिपि में चिन्हों की एकरूपता सर्वत्र नहीं दिखाई देती। कुछ ऐसी ध्वनियाँ हैं, जिनके लिये एक से अधिक चिन्हों का भी प्रचार है, जैसे—'र' के लिए '', '्र', '़' व '' चिह्न 'क्त' के लिए 'क्त' तथा त्त चिह्न, 'अ' के लिए 'अ' व 'आ' चिह्न तथा 'ण' के लिए तथा 'ण' चिह्न।

6. कुछ वर्णों की बनावट में भी बहुत कम अन्तर है, जैसे—'व' और 'ब'।

7. इस लिपि में कुछ वर्ण ऐसे हैं जो लिखे कुछ जाते हैं और पढ़े कुछ और जा सकते हैं, जैसे 'खाना' को 'रवाना' और 'अणय' को 'अराय' पढ़ा जा सकता है।

8. रेफ (' ') उच्चारण के क्रम से नहीं लिखा जाता, इसलिये अधिकांश बच्चे 'आशीर्वाद' को 'आर्शीवाद' लिखते हैं।

9. 'उ' तथा 'ऊ' की मात्रायें तो सभी व्यंजनों के नीचे लगती हैं परन्तु 'र' व्यंजन के बीच में लगती है, जैसे—'कु', 'कू', परन्तु 'रु','रू'।

10. मुद्रण और टंकन की कठिनाई के कारण भी विद्वान इसे सही नहीं मानते हैं।

1.5 देवनागरी लिपि में सुधार के प्रयास

देवनागरी लिपि में सुधार हेतु निम्न सुझाव दिये गये हैं—

1. एक ध्वनि के लिये एक चिन्ह होना ही वैज्ञानिक लिपि की महत्वपूर्ण विशेषता है अत: 'र' ध्वनि के लिये प्रयुक्त '' में से केवल 'र' को लेकर शेष को छोड़कर तथा 'ल' एवं क्त (मराठी ल) में से केवल 'ल', 'ऋ' व 'अ' में से केवल अ: 'ण' व 'ण' में से केवल 'ण', 'त' व त्र में से केवल 'त्' 'ग्य' व 'ज्ञ' में से केवल 'ग्य', 'क्श' व क्ष में से केवल 'कश' लेकर शेष को छोड़कर इसे अधिक वैज्ञानिक बनाया जा सकता है।

2. काका कालेलकर के सुझाव के अनुसार 'अ' पर मात्रायें लगाकर सभी स्वरों की जानकारी करायी जा सकती है, जैसे—अ, आ, अि, अी, अु, अू, अे, अै, ओ, औ।

3. अक्षरों में समानता के कारण भ्रम की गुंजाइश बनी रहती है। खाना, रवाना, अणडा-अराडा, 'ख', 'र', 'व', 'ण' तथा र में कोई भेद दृष्टिगत नहीं होता। यह भ्रम 'ख' के नीचे के भाग को मिला देने तथा 'ण' को अपना लेने एवं 'रा' को छोड़ देने से दूर हो सकता है। 'म' 'भ' तथा 'घ' 'ध' में भी भ्रम बना रहता है। इससे बचने के लिये भ तथा 'घ' को 'भ' ध को घुण्डीदार बनाया जा सकता है।

4. एक मत यह भी है कि जितनी भी मात्रायें लगाई जायें, वे सभी व्यंजनों के पश्चात् दाहिनी ओर लगाई जानी चाहिये। ऐसा नहीं कि कहीं बाई ओर-कहीं दाईं ओर-कहीं ऊपर-कहीं नीचे।

निष्कर्ष

अत: यह कहा जा सकता है कि सभी भारतीय भाषाओं के लिये यदि एक लिपि की आवश्यकता हो तो देवनागरी को ही ग्रहण करना उत्तम है।

इस सन्दर्भ में सुश्री आशारानी बोहरा का कथन उल्लेखनीय है। वे कहती हैं—''आचार्य विनोबा भावे ने राष्ट्रीय एकता की इसी बात को आगे बढ़ाते हुये राष्ट्र भाषा के साथ नागरी लिपि की अनिवार्यता पर भी जोर दिया था। उन्होंने कहा था कि 'नागरी' लिपि अगर हिन्दुस्तान की सारी भाषाओं के लिये चल पड़े, तो हम सब लोग एक दूसरे के बहुत नजदीक आ जायेंगे। इससे हिन्दी वाले भी दक्षिण की भाषायें आसानी से सीख सकेंगे और ये चारों भाषायें, जो समान होते हुये भी अलग लिपि के कारण परस्पर कटी-फटी हैं, आपस में सहज सम्बन्ध बना सकेंगी।'' गाँधी जी ने भी यह कहा था कि हिन्दुस्तान में सर्वमान्य हो सकने वाली यदि कोई लिपि है, तो वह देवनागरी ही है। इस प्रकार इस लिपि को महत्ता उपयोगी मानते हुए इसे भारत की राष्ट्रीय लिपि घोषित किया गया है।

प्रश्न

1. देवनागरी भाषा से क्या समझते हो है ?
2. भाषा तथा लिपि के प्रादुर्भाव की तुलना कीजिए।
3. ब्राह्मी लिपि के विकास पर समीक्षात्मक चर्चा कीजिए।
4. देवनागरी लिपि के आरम्भ और इसके नामकरण पर प्रकाश डालिए।
5. देवनागरी लिपि की विशेषताओं का अंकन कीजिए।
6. देवनागरी के गुण तथा दोषों पर प्रकाश डालिए।

अध्याय

3

हिन्दी भाषा का स्वरूप एवं महत्त्व

हिन्दी भाषा की संरचना

- उद्देश्य
- भूमिका
- सामाजिक जीवन में भाषा का महत्त्व
- भारत में भाषा के विविध रूप
- मातृभाषा अर्थ एवं महत्त्व
- राष्ट्रभाषा
- संस्कृति–भाषा
- विदेशी भाषा

हिन्दी भाषा के उद्देश्य

- हिन्दी भाषा के महत्त्व का प्रतिपादन।
- मातृभाषा के रूप में हिन्दी भाषा की भूमिका।
- राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी की भूमिका।
- संस्कृति भाषा तथा विदेशी भाषा से परिचय।

1.1 भूमिका

भाषा के बिना मनुष्य के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। भाषा के अभाव में वह पशु तुल्य हैं। भाषा का आविष्कार और विकास वस्तुत: मनुष्य का विकास है।

1.2 सामाजिक जीवन में भाषा का महत्त्व

मनुष्य के व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में भाषा का महत्व निम्न प्रकारेण व्यक्त कर सकते हैं—

1. विचार विनिमय का सर्वोत्तम साधन–मनुष्य जन्म के कुछ समय पश्चात् ही परिवार में रहकर भाषा को स्वाभाविक रूप से सीख लेता है। इसे सिखाने के लिये किसी शिक्षक की आवश्यकता नहीं पड़ती तथा यह विचार विनिमय का एक शिष्ट माध्यम है।

2. चिन्तन एवं मनन का स्त्रोत–भाषा विचारों की सृजन शक्ति का स्त्रोत है। हम भाषा में ही, चिन्तन और मनन करते हैं। विश्वशान्ति और मानव एकता के प्रयास में भी वह अपने पग निरन्तर आगे बढ़ा रहा है। अपने विचारों की गहराई चिन्तन एवं मनन के कारण ही मनुष्य प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ है।

3. व्यक्तित्व के निर्माण में सहायक–भाषा व्यक्तित्व के विकास का महत्वपूर्ण कारक है। सुन्दर प्रांजल भाषा बोलना, अपने भावों एवं विचारों को सफलतापूर्वक अभिव्यक्त कर सकना और अनेक भाषायें बोल सकना

विकसित व्यक्तित्व के ही लक्षण हैं। अत: जिस व्यक्ति की अभिव्यक्ति जितनी स्पष्ट होगी, उसके व्यक्तित्व का विकास भी उतने ही प्रभावशाली ढंग से होगा।

4. साहित्य एवं कला, संस्कृति एवं सभ्यता का विकास–साहित्य भाषा में लिखा जाता है। भाषा का विकास उसके पल्लवित साहित्य के दर्पण में देखा जाता है। इसी प्रकार कला के स्वर भी भाषा में मुखरित होते हैं। भाषा के द्वारा ही हम अपने समाज के आचार-व्यवहार, लोकाचार और अपनी विशिष्ट जीवन शैली से अवगत होते हैं तथा भाषा के द्वारा ही हम नवीन आविष्कारों के आधार पर एक नवीन सृष्टि का सृजन करते हैं।

5. सामाजिक जीवन में भाषा–भाषा ही समाज को जोड़ती है। भाषा जितनी विकसित होगी, समाज उतना ही विकासशील होगा। भाषा समाज के सदस्यों को एक सूत्र में बाँधती है। वस्तुत: यह भाषा ही है जिसके आधार पर विभिन्न जातियों, धर्मों व क्षेत्रों के लोग मिलजुलकर रहते हैं।

6. भाषा और राष्ट्र–समस्त राष्ट्र के प्रशासन का संचालन भाषा के माध्यम से होता है। भाषा राष्ट्रीय एकता का मूलाधार है।

7. शिक्षा की प्रगति की आधारशिला–भाषा, शिक्षा का तो आधार ही है, समस्त ज्ञान-विज्ञान के ग्रन्थ भाषा में ही लिपिबद्ध होते हैं। यदि भाषा न होती तो शिक्षा का स्वरूप भी निर्मित नहीं होता और यदि शिक्षा की व्यवस्था नहीं होती तो मानव असभ्य, बर्बर और जंगली रहा होता।

1.3 भारत में भाषा के विविध रूप

भारत में भाषा के निम्नलिखित रूप हैं—

(क) मातृभाषा,
(ख) राष्ट्रभाषा,
(ग) संस्कृति-भाषा
(घ) विदेशी भाषा।

1.4 (क) मातृभाषा अर्थ एवं महत्त्व

मातृभाषा से आशय

भाषा का प्रथम रूप 'मातृभाषा' है। मातृभाषा का शाब्दिक अर्थ है—माँ से ग्रहण की हुई भाषा। किन्तु हम 'जननी जन्मभूमिश्च' कहकर माँ के विशाल रूप में मातृभूमि को भी देखते हैं। अत: जन्मभूमि में व्यवहृत भाषा को मातृभाषा कहते हैं। कभी-कभी माँ की भाषा एवं मातृभूमि की स्वीकृत भाषा में अन्तर होता है। यथा उत्तर प्रदेश में अधिकांश छात्र आरम्भ में अपनी माता के मुँह से अवधी, ब्रज, भोजपुरी आदि सुनते हैं, किन्तु उत्तर प्रदेश की मातृभाषा हिन्दी है। अवधी, ब्रज, भोजपुरी आदि हिन्दी की बोलियाँ हैं। ये स्वतन्त्र भाषायें नहीं हैं। इन्हें जनपद भाषा भी कहा जाता है। जनपद भाषाओं को मातृभाषा के समकक्ष नहीं रखा जा सकता।

भारत के सन्दर्भ में मातृभाषायें क्षेत्रीय भाषायें भी हैं। संविधान की आठवीं अनुसूचियों में इन्हें शामिल किया गया है।

मातृभाषा ही व्यक्ति को उसका सामाजिक स्वरूप प्रदान करती है, उसे परम्परा एवं संस्कृति से परिचित कराती है तथा उसे माता-पिता का बोध कराती हैं। मातृभाषा ही व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास की कुँजी है।

मातृभाषा का महत्व

मातृभाषा के ज्ञान के अभाव में शिक्षा का विकास असम्भव है। इसी कारण आज संसार के लगभग सभी देशों में मातृभाषा के महत्व को समझते हुये इसी के माध्यम से शिक्षा देने का प्रावधान है। मातृभाषा के महत्व अग्रांकित हैं—

1. छात्रों के शारीरिक विकास में सहायक–शारीरिक विकास के लिये जितना आवश्यक पौष्टिक भोजन होता है उतना ही आवश्यक पूरी नींद सोना और प्रसन्नचित्त रहना। मातृभाषा इस आवश्यकता की पूर्ति में सहायक सिद्ध होती है। मातायें शिशुओं को संगीत प्रधान ध्वनियों (लोरियों) के उच्चारण द्वारा प्रसन्न करती हैं और निद्रामग्न कराती हैं। मातृभाषा के सामान्य अध्ययन के पश्चात् जब बच्चे उसके साहित्याध्ययन की ओर बढ़ते हैं तब उन्हें सच्चे आनन्द की अनुभूति होती है। **रायबर्न** के मतानुसार "मातृभाषा एक उपकरण है, आनन्द, प्रसन्नता और ज्ञान का एक स्रोत है, रुचियों एवं अनुभूतियों का एक निदेशक है और विधाता द्वारा मनुष्य को दी हुई उस सर्वोत्तम शक्ति के प्रयोग का साधन है जिसके द्वारा हम उस भगवान के निकटतम पहुँचते हैं।"

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि मातृभाषा मनुष्य में साहित्याध्ययन की अभिरुचि जागृत करती है जिससे वह अपने अवकाश के क्षणों में साहित्यिक रचनाओं का रसास्वादन कर सके। इससे आनन्द लाभ होता है एवं शारीरिक विकास होता है।

2. छात्रों के बौद्धिक एवं मानसिक विकास में सहायक–मानसिक विकास के लिये सबसे पहली आवश्यकता विचार शक्ति की होती है। विचार एवं भाषा का अटूट सम्बन्ध है—विचार भाषा को जन्म देते हैं और भाषा विचारों को। जिस व्यक्ति के पास जितनी सशक्त भाषा होगी, उतनी ही सशक्त उसकी विचार शक्ति होगी। गाँधी जी ने "मानसिक विकास के लिये भाषा को उतना आवश्यक माना है जितना शिशु के शारीरिक विकास के लिये माता का दूध।"

3. छात्रों के सामाजिक विकास में सहायक–मातृभाषा बालक को सामाजिक स्वरूप प्रदान करती है। बालक मातृभाषा में बोलना, लिखना, तर्क करना, भाषण देना आदि सीखता है। वह अपने विचारों और भावों की अभिव्यक्ति जितनी प्रभावोत्पादकता के साथ करेगा, समाज में उसकी स्थिति उतनी ही दृढ़ होगी। मनुष्य को समाज के रूप में संगठित और विकसित करने का श्रेय मातृभाषा को ही है।

4. छात्रों के सांस्कृतिक विकास में सहायक–साहित्य समाज का दर्पण है। मातृभाषा में लिखित साहित्य वास्तव में जातीय संस्कृति, सभ्यता और रीति-रिवाजों का प्रतिनिधित्व करता है। जाकिर हुसैन कमेटी रिपोर्ट में लिखा गया है कि "मातृभाषा बालकों को अपने पूर्वजों के विचारों, भावों तथा महत्वाकांक्षाओं की समृद्ध थाती से परिचित कराने का सर्वोत्तम साधन है।" मातृभाषा छात्र सांस्कृतिक जीवन के विकास की प्रारम्भिक स्थिति है।

5. छात्रों के भावात्मक विकास में सहायक–बच्चे मातृभाषा को माता और मातृभूमि के समान बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। यही कारण है कि एक मातृभाषा भाषी व्यक्तियों में प्रेम रहता है, वे एक दूसरे की सहायता करते हैं। एक भाषा-भाषी व्यक्तियों के बीच जो सद्भावना रहती है वह भिन्न भाषा-भाषी व्यक्तियों के बीच नहीं रहती।

6. छात्रों के नैतिक एवं चारित्रिक विकास में सहायक–यह सभी भली-भाँति जानते हैं कि बच्चों पर प्रारम्भिक जीवन में पड़े संस्कार एवं विचार अमिट छाप छोड़ते हैं और वे ही उसके उसके चरित्र का निर्माण करते हैं। माता ही बालक की प्रथम शिक्षिका होती है। यदि मातायें बच्चों को रोचक एवं नैतिक कहानियाँ सुनाती है तो आगे चलकर बच्चे मातृभाषा की पुस्तकों में भी इसी प्रकार की कहानी, नाटक, लेख और कवितायें पढ़ते हैं जिससे उनके चरित्र का विकास होता है।

7. मातृभाषा शिक्षा प्रदान करने का सर्वोत्तम साधन–मातृभाषा विचार विनिमय का सर्वोत्तम साधन माना जाता है, इसलिये यह शिक्षा प्रदान करने का भी सर्वोत्तम साधन है। सैम्पसन के अनुसार, "स्पष्ट शब्दों में एवं साधारण अर्थ में अंग्रेजी (मातृविषय) शिक्षण विषय है ही नहीं, वह तो स्कूली जीवन का आधार है—उसे शिक्षण विषय कहने की अपेक्षा जीवन का अनिवार्य आधार ही कहना चाहिये।"

8. मातृभाषा के साहित्य के अध्ययन से आनन्द की सृष्टि–काव्य, कविता, उपन्यास, कहानी, आदि मातृभाषा में ही लिखे होते हैं। उनको पढ़ने से बालक के मन में आनन्द की सृष्टि होती है—वह प्रसन्नता के समुद्र

में डूबता-उभरता रहता है। मातृभाषा में लिखा लोक साहित्य पढ़कर जहाँ बालक को ज्ञान की प्राप्ति होती है, वहाँ उनमें भावनाओं का प्रक्षेपण पाकर उसे आनन्द की अनुभूति भी होती है।

9. ज्ञान के प्रसारण और संरक्षण की वाहिका–मातृभाषा के शिक्षण से जहाँ ज्ञान एवं उपलब्धियों का पीढ़ी दर पीढ़ी प्रसार होता है वहीं आगामी पीढ़ियों के लिये उसके संचय और संरक्षण में भी सहायता मिलती है। इसलिये मातृभाषा को सभी ज्ञान-विज्ञान एवं सभी प्रकार की शिक्षा का आधार समझा गया है।

10. छात्रों की सृजनात्मक प्रतिभा के विकास में सहायक–मातृभाषा पर धीरे-धीरे अधिकार कर लेने के पश्चात् छात्र मातृभाषा में अपनी इस क्षमता के आधार पर कवितायें, कहानियाँ, उपन्यास, लघु कथायें व लेख आदि लिखने लगते हैं। इस प्रकार आत्माभिव्यक्ति का अवसर मिलने से छात्रों की सृजनात्मक प्रतिभा का विकास होता है।

1.5 (क) राष्ट्रभाषा

भाषा का दूसरा रूप 'राष्ट्रभाषा' कहलाता है। राष्ट्रभाषा वह कहलाती है जो देश के बहुसंख्यक लोगों द्वारा बोली जाती हो और जिसके द्वारा राष्ट्र के निवासी परस्पर विचारों का आदान-प्रदान करते हों। स्वतन्त्रता के पूर्व भी भारत की राष्ट्रभाषा सही अर्थों में हिन्दी थी। हिन्दी में ही धुर दक्षिण में स्थित रामेश्वरम् के आस-पास के लोग भारतीयों का स्वागत करते थे, भारत के अनेक तीर्थों में लोग इसी भाषा का व्यवहार करते थे। भारत के स्वतंत्रता संघर्ष में राष्ट्रभाषा का अपना एक अलग महत्व रहा है। सुभाषचन्द्र बोस इसे राष्ट्रीय एकता के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण मानते थे। हमारे राष्ट्र, भारत के इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण दिन था—14 सितम्बर, 1949 ई०। उस दिन भारतीय संविधान-सभा ने सर्वसम्मति से स्वतन्त्र भारत गणतन्त्र संघ की राजभाषा के रूप में हिन्दी को स्वीकारा था। उस दिन तमिल, तेलगू, कन्नड़, मलयालम, मराठी, गुजराती, पंजाबी, हिन्दी, बंगला, असमिया और उड़िया को राज्यों की राजभाषा के रूप में स्वीकारा गया था। इसी राज्य की राजभाषा वर्ग में कोंकणी, नेपाली, मणिपुरी को भी सम्मिलित किया गया है। संविधान के इसी राजभाषा वर्ग में संस्कृत, उर्दू तथा सिन्धी भाषा को राष्ट्रभाषा रूप में स्वीकारा गया है।

जब भारत का संविधान बना और 14 दिसम्बर सन् 1949 को संविधान सभा ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता प्रदान की। यह तो ऐतिहासिक सत्य था, जिसे संविधान सभा ने केवल स्वीकृति प्रदान की। उसने हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाया नहीं, राष्ट्रभाषा तो वह थी ही, बस स्वीकार किया। स्वतन्त्र भारत में भी राष्ट्रभाषा हिन्दी ही है। अभी भी चेन्नई, हैदराबाद, बंगलौर, मैसूर, त्रिवेन्द्रम, औरंगाबाद, पूना, मुम्बई, अहमदाबाद, बड़ोदरा, कोलकाता, पुरी, कटक, जालन्धर, श्रीनगर आदि नगरों में हिन्दी विश्वविद्यालयों के हिन्दी विभागों में ही नहीं सड़क पर भी समझी जाती है।

पण्डित नेहरू ने राज्यसभा में एक बार अपने भाषण में कहा था—"अंग्रेजों की छत्रछाया में 19वीं शताब्दी में हमारे देश में अंग्रेजी जानने वालों की एक नई जाति पैदा हुई थी। इस जाति ने देश के राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन में स्वार्थी बनकर भारत को हानि पहुँचायी। मैं भी कुछ हद तक इस बुराई का शिकार रहा। मेरा दृढ़ मत है कि अंग्रेजी के प्रति लोगों का मनोवैज्ञानिक लगाव, अब खत्म होना चाहिये, जिससे लोगों के चरित्र पर इसका बुरा प्रभाव न पड़े।"

भारतीय संविधान में हिन्दी को राष्ट्रभाषा का गौरवपूर्ण स्थान प्रदान किया गया परन्तु प्रादेशिक संकीर्णता के कारण सम्भव नहीं हो सका। दुर्भाग्य यह है कि विदेशी भाषा को अपनाने संकोच में नहीं है परन्तु हिन्दी को अपनाने में आपत्ति रही है। जबकि हिन्दी में राष्ट्र भाषा के सभी गुण समाहित हैं—

1. हिन्दी एक ऐसी भाषा है जिसे अधिकांश भारत की जनता बोलती तथा समझती है। विविध भारती के संगीतों का सभी प्रदेशों के निवासी आनन्द लेते हैं, इसी प्रकार दूरदर्शन के सभी कार्यक्रम देखते तथा सुनते हैं।

उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा तथा बिहार हिन्दी भाषी राज्य हैं, तथा पंजाब, हिमाचल प्रदेश, गुजरात के कुछ भागों में हिन्दी भाषा का उपयोग निरन्तर होता है। भारत के सभी राज्यों में हिन्दी भाषा का प्रयोग किसी न किसी रूप में किया जाता है। भारत में हिन्दुओं के चार धामों—बद्रीनाथ, द्वारिकापुरी, जगन्नाथपुरी तथा रामेश्वरम् में सभी दर्शन हेतु जाते रहे हैं। इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश, हिन्दी भाषी प्रदेश में अयोध्या, मथुरा, वृन्दावन आदि धर्मस्थल हैं। सभी राज्यों से इन धर्मस्थलों पर लोग आते हैं और हिन्दी का व्यवहार होने के कारण सभी हिन्दी सीखना चाहते हैं। राष्ट्र निर्माण और भावात्मक एकता में राष्ट्र भाषा की अहम् भूमिका होती है। हमें राष्ट्र भाषा की आवश्यकता क्यों है?

(1) देशवासियों में परस्पर सम्पर्क तथा विचारों का आदान-प्रदान एक राष्ट्र भाषा के माध्यम से ही होता है।

(2) राष्ट्रभाषा देश के गौरव तथा सम्मान का भी प्रतीक होती है, इसका अभाव हीन भावना का परिचायक माना जाता है।

(3) राष्ट्रीय एकता और भावात्मक एकता का विकास एक राष्ट्रभाषा के माध्यम से ही होता है।

(4) भारत जैसे विशाल देश में भाषाओं की विविधता का होना स्वाभाविक है। सभी भाषाओं का आदर सम्मान तथा विकास किया जाना चाहिये परन्तु राष्ट्र भाषा अपने देश की भाषा होनी चाहिये।

1.6 (ग) संस्कृति भाषा

तीसरे रूप में भाषा हमारे समक्ष संस्कृति भाषा के रूप में आती है। संस्कृति भाषा वह भाषा होती है, जिसमें किसी देश की प्राचीन संस्कृति विद्यमान रहती है। भारत की संस्कृति भाषा संस्कृत है, भाषा ही नहीं अपितु भाषाओं की जननी है। यह देवभाषा कहलाती है। शिक्षा की दृष्टि से संस्कृत भाषा का महत्व विशेष माना जाता है।

आजकल बहुत से विद्वान भारतवर्ष की संस्कृति-भाषा के रूप में अंग्रेजी को स्थान देने लगे हैं और जो व्यक्ति अंग्रेजी बोलने में दक्ष हैं उसे सुसंस्कृत समझने लगे हैं। हिन्दी के पक्षधर भी अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में शिक्ष दिला रहे हैं जो एक चिन्तनीय विषय है। दूसरी और करोड़ों-भारतवासियों द्वारा-बोली जाने वाली, समझी जाने वाली और कार्य-व्यापार में व्यवहृत होने वाली हिन्दी भारत की स्वत: सिद्ध राष्ट्रभाषा है। इसके प्रचार प्रसार और उत्थान के सतत प्रयास किये जा रहे हैं।

1.7 (घ) विदेशी भाषा

विज्ञान की उन्नति और वैश्विक अर्थव्यवस्था ने दुनिया को छोटा कर दिया है और अब कोई भी राष्ट्र अकेला नहीं रह सकता। उसे अन्य राष्ट्रों से सम्पर्क रखना पड़ता है। इस दृष्टि से प्रत्येक देश में संसार की कुछ समर्थ भाषाओं या पड़ौसी राष्ट्र की भाषाओं का अध्ययन-अध्यापन होता है। इन भाषाओं का रूप विदेशी भाषाओं का होता है। भारत में रूसी, चीनी, जर्मन, फ्रेंच तथा अंग्रेजी आदि विदेशी भाषायें हो सकती हैं। ऐतिहासिक कारणों से भारत में विदेशी भाषा के रूप में अंग्रेजी को भविष्य में भी वरीयता मिलेगी वही आर्थिक रूप से संशक्त देशों इंग्लैण्ड व अमेरिका में अंग्रेजी का ही बोलबाला है। इन देशों में रोजगार व व्यापार में अवसर प्राप्त करने हेतु अंग्रेजी का प्रचार प्रसार चरम पर है। भारत में विदेशी भाषा में सर्वाधिक संख्या अंग्रेजी समझने बोलने बालों की है। अत: भाषा के विविध रूपों में अंग्रेजी का स्थान एक विदेशी भाषा के रूप में ही हो सकता है। लेकिन राजभाषा और राष्ट्रभाषा का पद हिन्दी को ही दिया जा सकता है।

निष्कर्ष–हिन्दी भाषा एक व्यापक स्वरूप में हमारे समक्ष है। हिन्दी भाषा आज साहित्य और पत्रकारिता की भाषा बनी हुई है। हिन्दी भाषा में रोजगार के अवसर भी बढ़ रहे हैं। हिन्दी भाषा के माध्यम से राष्ट्रीय एकता के प्रयास फलीभूत हो सकते हैं।

प्रश्न

1. मातृभाषा क्या है ? मानव के सामाजिक जीवन में मातृभाषा का क्या महत्त्व है ?
2. मातृभाषा बालक के नैतिक विकास में कहाँ तक सहायक है ?
3. राष्ट्रभाषा से क्या समझते हो ? किसी राष्ट्र की एकता के लिए राष्ट्रभाषा क्यों आवश्यक है।
4. "राष्ट्रभाषा भाषा का दूसरा रूप है"। इस कथन से आप क्या समझते हैं ?
5. राष्ट्रभाषा और संस्कृति भाषा का क्या सम्बन्ध है ?
6. विदेशी भाषाओं में कौनसी भाषा भारत में सर्वाधिक समझी और बोली जाती है।

अध्याय

4

मातृभाषा शिक्षा के उद्देश्य और सिद्धान्त

मातृभाषा शिक्षा की संरचना

- ❖ भूमिका
- ❖ मातृभाषा शिक्षा के उद्देश्य
- ❖ मातृभाषा शिक्षा के मूल उद्देश्य
- ❖ विभिन्न स्तरों पर मातृभाषा शिक्षा के उद्देश्य
- ❖ मातृभाषा शिक्षा के सामान्य सिद्धान्त
- ❖ मातृभाषा का पाठ्यक्रम में स्थान

मातृभाषा शिक्षा के उद्देश्य

- ❖ मातृभाषा से परिचय तथा उसके विभिन्न उद्देश्यों से परिचय।
- ❖ शिक्षा के विभिन्न स्तरों के अनुसार उद्देश्यों की पूर्ति का संज्ञान।
- ❖ मातृभाषा के सिद्धन्तों से छात्रों का विकास कराना।

1.1 भूमिका

हमारे दैनिक जीवन में मातृभाषा का प्रयोग किया जाता है। मातृभाषा में ही हम अपने भावों व विचारों को बोलकर एवं लिखकर अभिव्यक्त करते हैं। इस प्रकार मातृभाषा शिक्षा का मुख्य उद्देश्य तो यही है कि छात्र मातृभाषा में विचार करने व इन विचारों को शब्दों का रूप देने में समर्थ हो।

पी० बी० बौलार्ड के शब्दों में, ''जब शब्द और आन्तरिक विचार ऐसे मिश्रित हों कि दोनों का विकास और ह्रास साथ ही साथ होता है, तब हम एक के विकास के बिना दूसरे का विकास नहीं कर सकते और मातृभाषा की, जिसमें बालक स्वप्न देखता है, और सोचता है, शिक्षा विद्यालय में प्राथमिक हो जाती है। यह भाषा ही संस्कृति का सबसे सूक्ष्म उपकरण है।''

1.2 मातृभाषा शिक्षा के उद्देश्य

अखिल भारतीय संगोष्ठी 1958, जो जबलपुर में आयोजित की गई थी, उसके अनुसार मातृभाषा शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये गये थे—

(1) ग्राह्यात्मक–इसके अन्तर्गत बोली हुई भाषा को समझना, लिखित भाषा को पढ़ना और समझना, पुस्तक के पाठों को क्रमशः बढ़ती हुई गति से पढ़ना तथा शब्द-भंडार, सूक्ति भंडार, मुहावरों व कहावतों आदि के भंडार को पढ़ाना आता है।

(2) सराहनात्मक–इस उद्देश्य के अनुसार छात्रों में भाषा तथा साहित्य के प्रति प्रेम और रुचि जागृत होनी चाहिये।

(3 रचनात्मक अथवा सृजनात्मक–सृजनात्मक उद्देश्य का तात्पर्य है साहित्य-सृजन की प्रेरणा देना और उन्हें रचना में मौलिकता लाने की योग्यता का विकास करने के लिये प्रेरित करना।

(4) अभिव्यंजनात्मक–इस उद्देश्य के अन्तर्गत सुन्दर और प्रभावोत्पादक ढंग से वाचन करना, शुद्ध व स्पष्ट भाषा में तीव्र गति से लिखना, पठित अवतरणों का विस्तृतीकरण एवं संक्षिप्तीकरण करने की क्षमता, पठित शब्दों, पठित सामग्री का मूल भाव निकालना, मुहावरों, सूक्तियों आदि का प्रयोग करना, दूसरों से प्रभावशाली ढंग से वार्तालाप करना, भावों को क्रमबद्ध करना, व उन्हें प्रस्तुत करने की क्षमता, दूसरों के समक्ष अपने विचारों को स्पष्टता से रखना तथा सन्दर्भ सामग्री का प्रयोग करना आदि आता है।

1.3 मातृभाषा-शिक्षा के मूल उद्देश्य

शिक्षा के मूल उद्देश्य निम्नवत् हैं—

1. ज्ञानात्मक उद्देश्य
2. कौशलात्मक उद्देश्य
3. सृजनात्मक उद्देश्य
4. अभिवृत्यात्मक उद्देश्य
5. समीक्षात्मक उद्देश्य

(1) ज्ञानात्मक उद्देश्य–इस उद्देश्य के द्वारा छात्रों को हिन्दी भाषा एवं साहित्य की मूलभूत बातों का ज्ञान प्रदान किया जाता है। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित तथ्य सम्मिलित होते हैं—

(क) भाषा के लिखित व मौखिक रूपों से अवगत करना।

(ख) छात्रों को ध्वनि, शब्द एवं वाक्य रचना का ज्ञान प्रदान कराना।

(ग) छात्रों को माध्यमिक स्तर पर हिन्दी की विविध विधाओं जैसे कहानी, उपन्यास, निबन्ध, काव्य आदि का सामान्य ज्ञान प्रदान करना।

(घ) विद्यार्थियों को ऐतिहासिक, भौगोलिक, वैज्ञानिक आदि तथ्यों का परिचय देना।

(2) कौशलात्मक उद्देश्य–इस उद्देश्य के अन्तर्गत सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना और अर्थ भावग्रहण आदि आते हैं। इसके अन्तर्गत निम्नांकित उद्देश्य सम्मिलित हैं—

(क) अर्थ ग्रहण करने की शक्ति, भाव संयोजन कला तथा अभिव्यक्ति की क्षमता का विकास।

(ख) मुहावरों, उक्तियों एवं उदाहरणों की जानकारी देना।

(ग) बोलकर या भाषण के द्वारा अपने भावों व विचारों को प्रकट करने की कला का विकास करना।

(घ) लिखकर अपनी अभिव्यक्ति क्षमता प्रदर्शित करना।

(3) सृजनात्मक उद्देश्य–सृजनात्मक उद्देश्य में कविता, गद्य, निबन्ध, कथा, पत्र, उपन्यास तथा सम्वाद की रचना का सृजन करने की क्षमता का विकास किया जाता है।

(क) छात्रों को लिखने के लिये प्रेरित करना।

(ख) काव्य, कथा निबन्ध, पत्र, संवाद तथा उपन्यास आदि की रचना को प्रोत्साहित करना।

(4) अभिवृत्यात्मक उद्देश्य–इस उद्देश्य के माध्यम से छात्रों के दृष्टिकोण एवं अभिवृत्तियों के सम्यक विकास के लिये प्रयास किया जाता है। इसमें दो अभिवृत्तियों का विकास होता है।

(क) सद्वृत्तियों का विकास,

(ख) भाषा तथा साहित्य में रुचि।

(5) समीक्षात्मक उद्देश्य–यह भाषा एवं साहित्य का अत्यधिक महत्वपूर्ण उद्देश्य है। इस उद्देश्य के अन्तर्गत निम्न बातें आती हैं।

(क) रसात्मक अनुभूति कराना तथा साहित्य का रसास्वादन करना।

(ख) साहित्य के विविध पक्षों की समालोचना का अध्ययन करना तथा स्वयं समालोचना करना।

1.4 विभिन्न स्तरों पर मातृ-शिक्षा के उद्देश्य

प्राथमिक स्तर–प्राथमिक स्तर पर हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

(क) छात्रों को लिपि का सही ज्ञान कराया जाये तथा उसका अधिकाधिक अभ्यास कराया जाये।

(ख) कविता पाठ का वाचन छात्रों को लय सहित कराना चाहिये।

(ग) सुलेख एवं श्रुतिलेख पर विशेष बल देना चाहिये।

(घ) छात्रों के शब्द भंडार में क्रमश: वृद्धि करना और छोटे-छोटे वाक्यांश बनाने की क्षमता का विकास करना।

(ड़) छात्रों के उच्चारण को शुद्ध बनाते हुये पाठ्यक्रम के स्तर की भाषा को भली भाँति बोलने की क्षमता का विकास करना।

माध्यमिक स्तर—माध्यमिक स्तर पर हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

(क) छात्रों को उचित गति से लिखने का अभ्यास कराना।

(ख) छात्रों को क्षेत्रीय लोकोक्तियों एवं मुहावरों का ज्ञान कराना।

(ग) छात्रों के शब्द एवं सूक्ति भंडार में वृद्धि करना।

(घ) छात्रों में अभिनय, अनुकरण एवं संवाद की योग्यता पैदा करना।

(ड़) छात्रों को व्याकरण के नियमों आदि से परिचित कराना।

उच्चतर माध्यमिक स्तर–उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्र को हिन्दी भाषा एवम् साहित्य की विविध विधाओं की जानकारी हो जाती है। इस स्तर पर भाषा शिक्षण के उद्देश्य हैं—

(क) उन्हें मौखिक एवं लिखित भाषा के माध्यम से बोध व भावग्रहण करने की क्षमता के योग्य बनाना।

(ख) छात्रों में शुद्ध उच्चारण तथा सृजनात्मक क्षमता की वृद्धि करना।

(ग) छात्रों को भाषा के व्यावहारिक विश्लेषण में समर्थ बनाना।

(घ) उन्हें स्वरचित कविता तथा निबन्ध आदि के लिये प्रोत्साहन प्रदान करना।

(ड) उन्हें भारतीय संस्कृति के विविध पक्षों की जानकारी देना।

(च) उच्च कोटि के लेखकों की लेखन शैली का ज्ञान कराकर उन्हें स्वयं अपनी शैली का निर्माण करने में सहयोग प्रदान करना।

1.5 मातृभाषा शिक्षा के सामान्य सिद्धान्त

बालक को मातृभाषा का अनुकरण उसी क्रम से कराना आवश्यक है जिस क्रम में बालक स्वाभाविक रूप से भाषा सीखता है। मातृभाषा शिक्षण में जिन सामान्य सिद्धान्तों का ध्यान रखा जाना आवश्यक है, वे निम्नलिखित हैं—

(1) अभिप्रेरणा एवं रुचि का सिद्धान्त–प्राय: यह देखा जाता है कि बच्चे उसी विषय या क्रिया में रुचि लेते हैं जो उनकी जन्मजात इच्छाओं को सन्तुष्ट करती है। मातृभाषा की शिक्षा देते समय भाषा एवं उसकी पाठ्य सामग्री के प्रति रुचि उत्पन्न करना आवश्यक है। अत: हिन्दी पाठ्य सामग्री और उसकी शिक्षा प्रणालियों का

चुनाव बच्चों की रुचि एवं आवश्यकता के अनुरूप किया जाना चाहिये। किसी वस्तु मॉडल या चित्र को दिखाकर वह बच्चों में उसके बारे में जानकारी की जिज्ञासा उत्पन्न कर सकता है। बच्चों को कवितायें कण्ठस्थ करने की भी प्रेरणा दे सकता है। बच्चों को अन्त्याक्षरी द्वारा भी भाषा सीखने की प्रेरणा दी जा सकती है।

2. अभ्यास का सिद्धान्त–मनोविज्ञान का यह मानना है कि पाठ जितनी तेजी से बालक याद करते हैं उससे तीव्रतर गति से विस्मृत करते हैं। इसी कारण अभ्यास का सिद्धान्त आवश्यक है इससे विस्मृति रुकती है तथा छात्रों का ज्ञान उत्तरोत्तर विकसित होता है। भाषा के कलात्मक पक्ष के लिये अभ्यास सर्वथा आवश्यक है।

3. क्रियाशीलता का सिद्धान्त–प्राय: सभी प्रमुख शिक्षाशास्त्रियों ने जिनमें गाँधी, डिवी, फ्रोबेल, पार्क, मॉन्टेसरी, ईस्ट आदि प्रमुख हैं, इस सिद्धान्त पर बल दिया है। भाषा शिक्षा के समय छात्रों को सतत् क्रियाशील रखने के लिये प्रश्न पूछना, स्कूल के साहित्यिक कार्यक्रम चलाना, छात्रों को उसमें क्रियाशील रखना, पाठों का अभ्यास कराना, मौखिक व लिखित कार्य कराना आदि कार्य अपनाये जा सकते हैं। इससे छात्रों की अध्ययन में रुचि बढ़ती है।

4. जीवन समन्वय का सिद्धान्त–प्रत्येक स्तर पर बच्चों का एक संसार होता है और जैसे-जैसे वे बड़े होते जाते हैं वैसे-वैसे ही अपने ढंग से एक नये संसार की कल्पना करने लगते हैं। मनोवैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया है कि बच्चे उन विषयों एवं क्रियाओं में अधिक रुचि लेते हैं जो उनके वास्तविक जीवन से सम्बन्धित होती हैं। अत: अध्यापक को चाहिये कि जो वह बच्चों को पढ़ाने के लिये पाठ्य-सामग्री चुने, उसका सम्बन्ध इनके जीवन से हो।

5. निश्चित उद्देश्य एवं पाठ्य सामग्री का सिद्धान्त–हिन्दी भाषा शिक्षा के एक नहीं अनेक उद्देश्य होते हैं। कुछ निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये हमें पाठ्य सामग्री का चयन करना आवश्यक है। पाठ्य सामग्री की एक रूप रेखा होनी चाहिये। प्राथमिक स्तर पर बच्चों को वर्णनात्मक निबन्ध लिखना सिखाया जाये। हिन्दी शिक्षा इससे बच्चों में सौन्दर्यानुभूति जागृत होती है।

6. वैयक्तिक विभिन्नता का सिद्धान्त–सभी प्रगतिशील शिक्षाशास्त्रियों ने वैयक्तिक विभिन्नता के सिद्धान्त पर बल दिया है। एक ही कक्षा के छात्रों में वैयक्तिक विभिन्नतायें होती हैं। कोई छात्र शुद्ध उच्चारण नहीं करता है, तो किसी का लेख स्पष्ट नहीं होता, किसी का वाचन ठीक नहीं है, तो किसी का लेख अशुद्ध है, कोई मौन पाठ नहीं कर पाता तो कोई कई बार याद करने पर भी तथ्य भूल जाता है।

7. अनुकरण का सिद्धान्त–बच्चे अनुकरण द्वारा शीघ्रता से सीखने, बोलने, लिखने, स्वर एवं गति आदि का अनुकरण करके वैसा ही सीखने का प्रयत्न करते हैं। यदि माता-पिता और विद्यालय में शिक्षक के बोलने के ढंग में अन्तर हो तो बच्चे शिक्षक के बोलने के ढंग का अनुकरण करना अधिक पसंद करते हैं।

8. बोलचाल का सिद्धान्त–भाषा-शिक्षा बोल चाल का सिद्धान्त मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा प्रदान करना सर्वश्रेष्ठ साधन है। इससे छात्र सक्रिय रहते हैं और उनमें रूचि व जिज्ञासा बनी रहती है।

9. चयन का सिद्धान्त–हिन्दी भाषा की शिक्षा के लिये कब, किस सिद्धान्त या पद्धति का सहारा लिया जाये, यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। किसी पाठ को किस रूप में प्रस्तुत करके छात्रों को सरल एवं सहज ग्राह्य बनाया जाये, इसके लिये बहुमुखी प्रयास करना चाहिये और जो अधिक प्रभावकारी हो, उसका चयन करना चाहिये जिससे छात्र लाभान्वित हो सकें।

10. शिक्षा सूत्रों का सिद्धान्त–शिक्षा के कुछ सामान्य सूत्र हैं जिनके अनुसार शिक्षा कार्य करने से बच्चों को सीखने में सरलता, सुगमता और स्थायित्व प्राप्त होता है, जैसे 'सरल से कठिन की ओर' 'ज्ञात से अज्ञात की ओर', 'मूर्त से अमूर्त की ओर', 'विशिष्ट से सामान्य की ओर', आगमन से निगमन की ओर, 'विश्लेषण से संश्लेषण की ओर', आदि।

11. आवृत्ति का सिद्धान्त–मनोवैज्ञानिक प्रयोगों से यह सिद्ध हो चुका है कि हिन्दी सीखने में आवृत्ति का बहुत बड़ा महत्व है। सीखी हुई बात को जितना अधिक दोहराया जायेगा वह उतनी ही अधिक देर तक याद रहेगी। बच्चों को जो कुछ पढ़ाया जाये उसकी आवृत्ति उसी समय उसी दिन तो की जा सकती है, साथ-साथ जब भी अवसर मिले उस ज्ञान अथवा क्रिया का प्रयोग करते रहना चाहिये।

12. साहचर्य सिद्धान्त–बच्चे दूसरों को सुनकर बोलना तो सीखते ही रहते हैं परन्तु इस प्रकार सीखे गये शब्दों को समझने के लिये साहचर्य का होना आवश्यक है। बच्चा माँ को माँ या मम्मी कहने के साथ पहचानना और समझना तभी सीख सकेगा जब शब्द (माँ) के उच्चारण के साथ स्वयं माँ को और पिताजी या पापा के उच्चारण के साथ स्वयं पिता को भी देखेगा। इस प्रकार शब्दोच्चारण और वस्तु अथवा व्यक्ति विशेष दोनों का साथ-साथ अर्थात् साहचर्य होने से ही बच्चों को उस शब्द की पहचान व समझ हो सकेगी।

1.6 मातृ-भाषा का पाठ्यक्रम में स्थान

भाषा मनुष्य और पशु का अन्तर करती है। वह भावों तथा विचारों के संक्रमण, आदान-प्रदान एवं संकलन का सर्वोत्तम साधन है तथा मातृभाषाओं में सर्वोत्तम है। इस कारण पाठ्यक्रम में मातृभाषा को विशेष स्थान प्रदान किया जाना चाहिये।

ब्रेल्सफोर्ड के अनुसार—"केवल एक ही भाषा में हमारे भावों की स्पष्ट व्यंजना हो सकती है, केवल एक ही भाषा के शब्दों को हम अपनी माता के दूध के साथ सीखते हैं, जिसमें हम अपनी प्रारम्भिक प्रार्थनाओं तथा हर्ष एवं शोक से उद्‌गारों को व्यक्त करते हैं। दूसरे किसी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाना विद्यार्थी के श्रम को आवश्यक रूप से बढ़ाना ही नहीं बल्कि उसके मस्तिष्क की गति को पंगु बना देना है।"

निष्कर्ष–यह कहना असंगत न होगा कि मातृभाषा के महत्व एवं उपयोगिता को देखते हुये विद्यालय के पाठ्यक्रम में उसे अन्य विषयों की तुलना में ऊँचा स्थान मिलना चाहिये। प्रारम्भिक कक्षाओं में तो अन्य विषयों की तुलना में मातृभाषा के अध्ययन पर दुगना समय लगाना चाहिये तथा अधिक परिश्रम करना चाहिये क्योंकि समस्त ज्ञान-विज्ञान का महल मातृभाषा की नींव पर ही खड़ा होता है। लेकिन इसके साथ ही माध्यमिक स्तर पर भी अन्य विषयों की अपेक्षा मातृभाषा के अध्ययन-अध्यापन पर भी बल देना न्यायोचित होगा।

प्रश्न

1. मातृभाषा का मानव जीवन में क्या महत्त्व है ?
2. मातृभाषा शिक्षा के उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।
3. विभिन्न स्तरों पर मातृभाषा के उद्देश्यों को प्रकट कीजिए।
4. मातृभाषा शिक्षा के सामान्य सिद्धान्त कौन-कौन से हैं ?
5. मातृभाषा का पाठ्यक्रम में क्या स्थान होना चाहिए ?

❑

अध्याय

5

कविता

संरचना

- ❖ उद्देश्य
- ❖ भूमिका
- ❖ कविता से अभिप्राय
- ❖ कविता की रसात्मकता
- ❖ काव्य विभाजन
- ❖ कविता के उद्देश्य
- ❖ काव्य पाठन की प्रणालियाँ

उद्देश्य

- ❖ छात्रों में काव्य वाचन लेखन एवं श्रवण के प्रति जाग्रत होने की प्रेरणा देना।
- ❖ विभिन्न रसों तथा स्थायी भावों आदि का ज्ञान कराना।
- ❖ कविता शिक्षण में अभिव्यक्ति तथा प्रस्तुतीकरण में शिक्षक की भूमिका का प्रतिपादन।

1.1 भूमिका

प्रकृति के विभिन्न रूपों से उद्भूत मनोभावों एवं जीवन की अन्यान्य परिस्थितियों के सम्बन्ध में अपनी वाणी द्वारा मानव अपने अनुभवों को व्यक्त कर संतोष, तृप्ति और आनन्द प्राप्त करता है। मनुष्य की इसी प्रवृत्ति की प्रेरणा से ज्ञान एवं आनन्द के उस भंडार का सृजन, संचय एवं संवर्धन होता रहा है जिसे साहित्य कहते हैं।

सुख-दुख की भावावेशमयी अवस्था का स्वर साधना के उपयुक्त पदों में प्रकाशन ही कविता है।

1.2 कविता से अभिप्राय

काव्य मनुष्य को उस धरातल पर ले जाता है जहाँ वह 'स्व' पर 'पर' की भावना से रहित होकर अपने को केवल मनुष्य अनुभव करता है। हृदय की इसी मुक्तावस्था के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती है, वही कविता कही जाती है।

श्री जय शंकर प्रसाद के अनुसार—''कविता आत्मा की संकल्पनात्मक अनुभूति है।''

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दानुसार–''कविता वह साधन है जो शेष सृष्टि के साथ हमारा रागात्मक सम्बन्ध स्थापित करती है।''

आचार्य विश्वनाथ के शब्दों में–''वाक्यं रक्षात्मकं काव्यम्' ऐसा वाक्य जो रसात्मक हो काव्य है।''

आचार्य दण्डी–"काव्य शोभाकरान्ध यननलंकारान्द्र चक्षते।"

आचार्य मम्मट–"तद्दोषौ" शब्दार्थौ सगुण व नलंकृति पुनः क्वापि।

दोषरहित, गुणयुक्त, प्रायः अलंकृत पर कभी-कभी अलंकृत शब्द और अर्थ को काव्य कहते हैं।

जयशंकर प्रसाद के अनुसार–पद्य आत्मा की संकल्पनात्मक अनुभूति है।

विदेशी विद्वज्जनों के मत में काव्य

कारलाइल के अनुसार–"संगीतमय विचार को ही पद्य कहते हैं।" (Poetry is musical thought.)

हडसन–"कविता कल्पना एवं मनोवेगों के माध्यम से जीवन की व्याख्या है।"

कालरिज के अनुसार–"सर्वोत्तम शब्दों का सर्वोत्तम क्रम ही कविता है।"

1.3 कविता की विशेषतायें

उपरोक्त परिभाषाओं में विद्वानों ने कविता की विशेषताओं का उल्लेख किया है। कविता की प्रमुख विशेषतायें निम्नांकित हैं—

(1) रसात्मक वाक्य ही काव्य होता है, जिसमें सौन्दर्य का संकेत होता है।

(2) सर्वोत्तम शब्दों में सर्वोत्तम क्रम में भाव अभिव्यक्ति ही कविता है।

(3) कविता सत्य और आनन्द के एकीकरण की कला है जबकि सत्य सदैव कटु होता है। कविता जीवन की समालोचना है।

(4) आत्मा की कल्पनात्मक अनुभूति काव्य है।

(5) कविता की धारा आरम्भ में दुखी हृदय से निकलती है। कविता उसे भावना से ऊँचा उठाकर वहाँ ले जाती है, जहाँ आनन्द ही आनन्द है।

(6) कविता से सत्यम् शिवम् तथा सुन्दरम् का बोध होता है तथा प्राप्ति भी की जा सकती है।

(7) कविता, जीवन, समाज तथा राष्ट्र का प्रतिबिम्ब होती है। कविता आनन्द की अनुभूति का सशक्त साधन है।

(8) कविता वह साधन है जिसकी सहायता से शेष सृष्टि के साथ रागात्मक सम्बन्ध की रक्षा तथा निर्वाह होता है।

(9) कविता में रस, अलंकार, लय, ध्वनि, सौन्दर्य का समावेश होता है।

1.4 काव्य की विशेषतायें

काव्य की विशेषतायें निम्नलिखित हैं—

(i) अनुभूति प्रधान–पद्य अनुभूति के रूप में हृदय से उमड़कर कवि की कलम से लिखा जाता है। कवि के रचनात्मक भाव को ही पद्य कहते हैं। पद्य रागात्मक सम्बन्ध की रक्षा तथा निर्वाह है। हमारा हृदय काव्य के समय इस भौतिक संसार से ऊपर उठकर काव्य के अलौकिक आलोक में विचरण करता है। इसमें कल्पना तथा अनुभूति की प्रधानता होती है।

(ii) सत्यम् शिवम् सुन्दरम् की भावना–'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' कविता के मुख्य उद्देश्य हैं किन्तु कविता के सत्य विधान के सत्य के समान सत्य नहीं होता अपितु उसमें कल्पना का भी मिश्रण होता है जो कविता को मुग्धकारी तथा सुन्दर बनाता है।

(iii) संगीतात्मक–संगीत काव्य की हृदय गति होता है। लय, ताल तथा स्वरों के आरोह-अवरोह के कारण ही कविता के भाव उभर कर आते हैं।

(iv) भाषा–कविता की भाषा सरल, सरस, मधुर तथा गाने योग्य होनी चाहिए।

(v) **रसानुभूति**–रस तथा काव्य परस्पर आधारित हैं एक के बिना दूसरा पक्ष कमजोर हो जाता है। इस कारण रस को काव्य की आत्मा कहा गया है।

1.5 कविता की रसात्मकता

साहित्याचार्यों ने रसात्मक वाक्य को काव्य कहा है। मन के विकार भाव कहलाते हैं। भाव ही रस का आधार है। भाव के दो रूप हैं—

(अ) स्थायी भाव

(ब) संचारी भाव।

प्रत्येक स्थायी भाव का एक निर्धारित रस है। आगे इन्हीं का उल्लेख किया जा रहा है—

रस	स्थायी भाव	रस	स्थायी भाव
1. शृंगार	रति या प्रेम	7. हास्य	हँसी
2. करुणा	शोक	8. वीर	उत्साह
3. रौद्र	क्रोध	9. भयानक	भय
4. वीभत्स	घृणा	10. अद्‌भुत	आश्चर्य
5. शान्त	निर्वेद	11. वात्सल्य	अपत्य स्नेह
6. भक्ति	ईश		अनुराग

1.6 काव्य-विभाजन

काव्य विभाजन छन्द के आधार पर किया गया है जो दो रूपों में दिखाई देता है—

(1) गद्य और

(2) पद्य।

यदि गद्य में रमणीयता, रसात्मकता और ध्वन्यात्मकता है तो वह भी काव्य के समान आनन्ददायी है। हिन्दी में गद्य काव्य की परम्परा से सभी परिचित हैं। स्वरूप के आधार पर काव्य के निम्नलिखित भेद हैं—

(1) महाकाव्य

(2) रूपक

(3) आख्यायिका

(4) कथा

(5) मुक्तक।

विषय के आधार पर चार भेद किये गये हैं—

(1) ख्यातवृत्त

(2) कलाश्रित

(3) कल्पित

(4) शास्त्राश्रित।

इन्द्रियों की ग्राह्यता के आधार पर काव्य के दो भेद किये गये हैं—

(1) दृश्य काव्य

(2) श्रव्य काव्य।

1.7 कविता के उद्देश्य

कविता कल्पना एवं मनोवेगों द्वारा जीवन की व्याख्या करती है। उसकी वृत्ति रागात्मक होती है। कविता का लक्ष्य काल्पनिक और भाव जगत में विचरण करने का साधन प्रस्तुत करता है। कविता उपभोग की वस्तु है। ज्ञानवर्द्धन की नहीं, अत: कविता पढ़ाते समय अत्यधिक व्याख्या, शब्दार्थ, व्याकरण आदि का स्पष्टीकरण करने की विशेष चिन्ता नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इससे रसानुभूति करने में व्याघात उत्पन्न होता है।

कविता हृदय की सीधी और सच्ची अभिव्यक्ति है। अतएव कविता का उद्देश्य मानव हृदय की रागात्मक प्रवृत्तियों का संशोधन संस्कार और उसकी सद्वृत्तियों का उद्बोधन है। कविता के माध्यम से कवि जीवन के कटु सत्यों का उद्‌घाटन करता है जैसे निराला ने वह तोड़ती पत्थर कविता में किया है। यर्थावादी कविता जीवन के कठोर धरातल का अंकन कर शोषित वर्ग के प्रति सहानुभूति उत्पन्न करती है। कविता के उद्देश्यों को अंग्रकित रूप में व्यक्त किया जा सकता है—

(क) ज्ञान–छात्रों को शब्द योजना, शब्द शक्तियों, छन्दों, अलंकारों, प्रस्तुत-अप्रस्तुत, मूर्त-अमूर्त, एवं जड़-चेतन विधानों और विभिन्न प्रकार के रसों की अनुभूति तथा शास्त्रीय ज्ञान कराना एवं बालकों को मानव जीवन के विविध पहलुओं एवं उनकी स्वयं की सभ्यता और संस्कृति से परिचित कराना, कविता के माध्यम से छात्रों को प्रकृति की सुन्दरता का अनुभव कराना है। इसके अतिरिक्त कविताओं के द्वारा सामाजिक आदर्शों, सामाजिक दशाओं, नैतिकता, धार्मिक विश्वासों, ऐतिहासिक एवं पौराणिक घटनाओं आदि का ज्ञान कराना है।

(ख) रुचि–छात्रों में कविता तथा साहित्य के अध्ययन के प्रति रुचि उत्पन्न करना, छात्रों की सृजनात्मक शक्तियों को विकसित करना तथा साहित्य रचना के प्रति उसकी रुचि जागृत करना है।

(ग) अभिव्यक्ति–छात्रों में सामाजिक आदर्शों के अनुकूल आचरण करने की प्रवृत्तियों को विकसित करना, छात्रों की अभिव्यक्तियों को परिमार्जित करके उनमें उच्च आदर्शों का निर्माण करना एवं काव्य-निहित सत्यं, शिवं, सुन्दरम् का विकास करना है।

(घ) छात्रों को इस योग्य बनाना कि वे कविता का सम्यक रसास्वादन ही नहीं कर सके वरन कविता में निहित भावों को अपने शब्दों में व्यक्त कर सके।

1.6 काव्य पाठन की प्रणालियाँ

कविता पाठन की अनेक विधियाँ हैं। उन विधियों में से कुछ विधियाँ निम्नलिखित हैं—

(क) गीत तथा अभिनय प्रणाली–यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि सीखने में जितनी अधिक ज्ञानेन्द्रियाँ प्रभावित व सक्रिय होंगी उनमें छात्र अधिक रुचि लेंगे और सीखने में स्थायित्व आता है। रेडियो की अपेक्षा दूरदर्शन अधिक रुचिकर होता है। श्रव्य एवं दृश्य दोनों इन्द्रियाँ प्रभावित होती हैं तथा सक्रिय भी होती हैं। अत: कविताओं में दो तत्वों—(i) गेयता तथा (ii) चित्रात्मकता का होना अत्यन्त आवश्यक है।

लाठी लेकर भालू आया। छम छम छम। छम छम छम।
ढोल बजाता मेंढक आया। ढम ढम ढम। ढम ढम ढम।

यह इस प्रकार की कविता है जिसमें गायन तथा अभिनय किया जा सकता है।

(ख) प्रश्नोत्तर प्रणाली–जिन कविताओं में भावना का तत्व प्रधान नहीं है अर्थात् जो वर्णनात्मक है अथवा जिनमें घटना की प्रमुखता पायी जाती है। उनमें प्रश्नोत्तर विधि ही प्रयोग में लायी जाती है।

(ग) व्यास प्रणाली–कथावाचन की भाँति विभिन्न प्रसंग, संदर्भ, उदाहरण् देते हुए कवि व्याख्या करता है। इसलिए इसे व्यास विधि की संज्ञा दी गयी है। इस विधि से भाषा तथा भाव दोनों ही दृष्टि से व्यापक अध्ययन हो जाता है। इस विधि में कविता के भाव, रस तथा भाषा के सभी पक्षों की व्याख्या के अतिरिक्त कविता के एक-एक शब्द के विशिष्ट भाव को विस्तार से समझाया जाता है।

(घ) समीक्षा प्रणाली–समीक्षा प्रणाली के अन्तर्गत कविता की उपादेयता भाषा, शैली के आधार पर समीक्षा की जाती है।

(ड़) शब्दार्थ प्रणाली–कवि इस प्रणाली में कविता में आये कठिन शब्दों के अर्थ बता देने के पश्चात् कविता के सीधे-सीधे अर्थ बता देता है। कविता का उद्देश्य है आनन्द की प्राप्ति। किन्तु इस प्रणाली से तो कविता के उद्देश्य की हत्या हो जाती है। परन्तु आम जन के लिए यह प्रणाली लाभदायक है क्योंकि वह कठिन शब्दों को भी कवि द्वारा समझकर कविता का रसास्वादन कर सकता है।

(च) व्याख्या प्रणाली–इस प्रणाली में कवि द्वारा उपयुक्त प्रश्नावली द्वारा श्रोताओं से कविता के भावों को व्यक्त कराने का प्रयत्न किया जाता है। आवश्यकतानुसार यथा प्रसंग कवि स्वयं भी व्याख्या प्रस्तुत करता है। इससे श्रोताओं की रुचि कविता में बनी रहती है। वह स्वयं भावार्थ समझने का प्रयत्न करता है और शिक्षक द्वारा गूढ़ या जटिल अंशों से सम्बन्धित व्याख्या सुनकर ग्रहण भी कर लेता है।

निष्कर्ष—कविता की अविरल धारा आदिकाल से बह रही है। यह राजाओं के आश्रय से लेकर मनुष्य की वैयक्तिकता वादी सोच में निरन्तर प्रवाहित होती रही है। इसने जहाँ भक्तिकाल में भक्ति के दिव्य रूपों में भावों को आकार दिया है। वही रीतिकाल में नारी सौन्दर्य को जीवंत रूप प्रदान किया है। आधुनिक काल में कविता ने प्रगतिवाद में जहाँ क्रांति का संदेश दिया है वही प्रयोगवाद द्वारा व्यैक्तिवाद के प्रवाह में बही है। आज की कविता मानव के दैनिक संघर्ष और समाज में फैली आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक विद्रूपता को उजागर कर रही है। कविता आज भी भावों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बनी हुई है।

प्रश्न

1. कविता से क्या अभिप्राय कहते हैं ? कविता शिक्षण के उद्देश्यों को रेखांकित कीजिए।
2. काव्य पाठन की प्रणालियों को समझाइए।

❑

अध्याय

6

कहानी

संरचना

- उद्देश्य
- भूमिका
- कहानी की परिभाषा
- कहानी का चुनाव
- कहानी का उद्देश्य
- कहानी में द्वन्द्व एवं संघर्ष
- कहानी का महत्त्व
- कहानी को सफल बनाने हेतु स्मरणीय बातें

उद्देश्य

- कहानी में रोचकता लाने तथा तारतम्य बैठाने के नियमों से परिचित कराना।
- कहानी के अर्थ तथा महत्त्व बताना।
- शिक्षण में कहानी शिक्षण के विभिन्न आयामों की भूमिका समझाना।

1.1 भूमिका

माता की लोरियाँ जहाँ बच्चे को स्वप्न लोक में ले जाती हैं, वहाँ दादा, दादी व नानी की कहानियाँ भी उसके स्वप्न संसार की रचना करने में कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। परिवार में बालक के लिए सुनने, समझने और मनोरंजन की दृष्टि से कहानी का बहुत महत्व है। कहानियाँ सुनने व पढ़ने से बालकों की कल्पना शक्ति का विकास होता है।

1.2 कहानी की परिभाषा

कहानी के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रस्तुत मत, जो निम्नलिखित हैं—

टी० एस० मेसल के अनुसार—''कहानी में द्वन्द्व अथवा संघर्ष की प्रबलता होती है।''

मुंशी प्रेमचन्द्र के अनुसार–''कहानी एक ऐसी रचना है जिसमें जीवन के किसी एक अंग अथवा एक मनोभाव को प्रस्तुत करना ही लेखक का उद्देश्य हो। यह एक ऐसा सुन्दर उद्यान नहीं है, जिसमें भली-भाँति, बेल-बूटे, फल तथा फूल हों, वरन् यह एक ऐसा गमला है जिसमें एक पौधे का माधुर्य अपने सन्तुलित रूप में दृष्टिगोचर होता है।''

1.3 कहानी का चुनाव

कहानी के चुनाव में अग्रांकित बाते स्मरणीय हैं—

(1) कहानी में क्रियाशीलता, गतिशीलता, वार्तालाप, नाटकीकरण, संस्कार तथा मनोरंजन के गुण होने चाहिएं।

(2) कहानी का चुनाव करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि उसमें कथोपकथन की पर्याप्त मात्रा हो। इससे विद्यार्थियों को सुनने में आनन्द का अनुभव होता है, नीरसता नहीं रहती।

(3) विद्यार्थी स्वभाव से क्रियाशील होते हैं। इसलिए उन कहानियों का चयन करना चाहिए जिनमें क्रियाओं का समावेश हो।

(4) कहानी में द्वन्द्व की अपनी विशिष्ट महत्ता है, अत: जीवन के कठोर धरातल पर इस प्रकार की कहानियाँ सम्बल प्रदान करती हैं।

(5) विद्यार्थियों को दुखान्त कहानियाँ नहीं सुनानी चाहिएँ।

(6) कहानी के शीर्षक सारगर्भित तथा उद्देश्यवर्धक होने चाहिएँ जिनसे कि विद्यार्थी, श्रोता तुरन्त आकृष्ट हो जाए।

(7) नैतिक मूल्यों और समाज में परिवर्तन के प्रति दायित्व बोध रखने वाली कहानियाँ का चयन श्रेयस्कर है।

1.4 कहानी का उद्देश्य

कहानी-शिक्षण के निम्नलिखित मुख्य उद्देश्य हैं—

1. ज्ञान–(i) छात्रों को शब्दों, मुहावरों, लोकोक्तियों व सूक्तियों का ज्ञान कराना।

(ii) छात्रों को कहानी लिखने की विविध शैलियों का ज्ञान कराना।

(iii) छात्रों को पौराणिक कथाओं, ऐतिहासिक घटनाओं, सांस्कृतिक मूल्यों, धार्मिक विश्वासों व आस्थाओं, सामाजिक दशाओं एवं मानव स्वभाव से परिचित बनाना।

2. कौशल–(i) छात्रों की मौखिक व लिखित अभिव्यक्ति का विकास करना।

(ii) छात्रों को कहानी कहने व लिखने में निपुण बनाना।

(iii) छात्रों की बोध, कल्पना एवं तर्क आदि शक्तियों का विकास करना।

(iv) छात्रों को मनोयोग से सुनने एवं पढ़ने में निपुण बनाना।

3. रुचि–(i) छात्रों में सृजनात्मक शक्तियों का विकास करते हुए उनमें कहानी लिखने की रुचि जाग्रत करना।

(ii) छात्रों का मनोरंजन करना तथा स्वाध्याय की दिशा में उन्हें अग्रसर करना।

4. अभिवृत्ति–(i) छात्रों में देश, जाति व धर्म के प्रति स्थायी भाव बनाना।

(ii) छात्रों के संवेगों को परिष्कृत कर उनकी चित्तवृत्तियों का परिमार्जन करना एवं उनमें उच्च सामाजिक आचरण करने की अभिवृत्ति का विकास करना।

1.5 कहानी में द्वन्द्व एवं संघर्ष

कहानी में द्वन्द्व एवं संघर्ष की प्रधानता उसे रोचक बनाती है। इससे पाठक आरम्भ से अन्त तक कहानी में खोया रहता है। इसका प्रभाव अमिट होता है। मंत्र प्रेमचन्द द्वारा इस द्वन्द्व का सशक्त उदाहरण है। जयशंकर द्वारा प्रणीत पुरस्कार इसका एक अन्य महत्वपूर्ण उदाहरण है। एक अच्छे कहानीकार की विशेषता है कि वह अपने पात्रों के कथोपकथन के माध्यम से ऐसा वातावरण उत्पन्न करता है जिससे कहानी में द्वन्द्व एवं संघर्ष का पल्लवन होता है। गुलेरी की 'उसने कहा था' 'संघर्ष की एक अनुपम कहानी है।'

द्वन्द्वात्मक कहानिया यर्थाथवादी अधिक होती है इनमें समाज का कुरूप चेहरा दिखाया जाता है। वही शोषित समाज की लाचारी, शोषण और बेबसी को दर्शाया जाता है।

1.6 कहानी का महत्व

(1) कहानियाँ बच्चों के शिक्षा एवं मनोरजन का मुख्य साधन हैं। इनके माध्यम से पाठकों को आदर्शों की ओर उन्मुख किया जा सकता है।

(2) कहानियों के माध्यम से पाठक की समझ का विकास होता है।
(3) पाठकों के संवेगों का विकास किया जाता है।
(4) पाठकों में समय का सदुपयोग किया जाता है।
(5) पाठकों की गुणात्मक शक्ति का विकास किया जाता है।
(6) पाठकों के चरित्र का निर्माण किया जाता है।
(7) उनमें काल्पनिकता का विकास किया जाता है।
(8) कहानी के माध्यम से रचनात्मकता का विकास पाठकों में किया जाता है।
(9) द्वन्द्वात्मक कहानियाँ पाठक में संघर्ष क्षमता का विकास करती है।
(10) कहानी जीवन के कटु सत्य को उद्घाटित कर देशकाल से परिचित कराती हैं।

1.7 कहानी को सफल बनाने हेतु स्मरणीय तथ्य

(i) कहानी भावों के अनुसार स्पष्ट एवं स्वाभाविक रूप से कही जानी चाहिए।
(ii) भाषा कक्षानुसार सरल, सुबोध और स्पष्ट हो।
(iii) कहानी को शिक्षाप्रद एवं आदर्शोन्मुख होना चाहिए।
(iv) एक दिन में नये शब्द व मुहावरे का अधिक प्रयोग नहीं करना चाहिए।
(v) कहानी का एक स्पष्ट उद्देश्य होना चाहिए जो प्रेरणादायक हो।
(vi) कहानी का शीर्षक संक्षिप्त हो और पूरी कहानी को व्यक्त करता हो।
(vii) देशकाल और वातावरण का स्मरण अनिवार्य है।
(viii) कथोपकथन द्वारा कहानी को जीवंत बनाने का प्रयत्न करना चाहिए जिससे पाठक उसमें रम जाए।
(ix) कहानी में उपर्युक्त पात्रों का चयन आवश्यक है जो देशकाल के अनुरूप देशज भाषा का सतीक करते हों।
(x) संवाद छोटे-छोटे लेकिन चुटीले होने सफल कहानी की पहचान है।
(xi) कहानी कौतूहल प्रधान होनी चाहिए जिससे पाठक आरम्भ से अन्त तक उसमें डूबा रहे और कहानी उस पर अमिट प्रभाव छोड़े।
(xii) एक अच्छी कहानी में समाज का यर्थाथ चित्रण परिलक्षित होता है अत: प्रेमचन्द पूस की रात, कफन मंत्र, ईदगाह जैसी—कहानियों को लिखकर अमर हो गए।
(xiii) कहानी न तो अधिक लम्बी और न अत्यधिक छोटी हो।

निष्कर्ष–मानव जीवन व्यापार-व्यवहार की सशक्त अभिव्यक्ति आज भी कहानी के माध्यम से हो रही है। कहानी अपने पूर्ण संवेग द्वन्द्व और कौतूहल में ऐसे पाठक के मस्तिष्क में छा जाती है जिससे उसके समक्ष सभी घटनाऐ जीवंत हो उठती है। मनुष्य की कल्पना साकार रूप में कहानी के माध्यम से दृष्टिगोचर होने लगती है। कहानी एक आंदोलन का रूप ले चुकी है। राजेन्द्र यादव की 'हंस' पत्रिका मानव के संघर्ष और शोषित वर्ग की मशाल बनकर सामने आ रही है।

प्रश्न

1. कहानी का अर्थ लिखते हुए कहानी कहने के उद्देश्य की समीक्षा कीजिए।
2. "कहानी में द्वन्द्व एवं संघर्ष की प्रबलता होती है।" इस कथन की पुष्टि कीजिए।
3. सफल काहनी हेतु किन तथ्यों का स्मरण आवश्यक है?
4. सफल कहानी कहने के लिए किन बातों का स्मरण आवश्यक है ?
5. कहानी के महत्व पर प्रकाश डालिए।

अध्याय

7

उच्चारण शिक्षा

संरचना

- ❖ उद्देश्य
- ❖ भूमिका
- ❖ शुद्ध उच्चारण से आशय
- ❖ उच्चारण का महत्त्व
- ❖ उच्चारण की सामान्य अशुद्धियाँ
- ❖ अशुद्ध उच्चारण के कारण
- ❖ अशुद्ध उच्चारण के सुधार हेतु सुझाव
- ❖ उच्चारण सम्बन्धी कुछ नियम
- ❖ वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियाँ
- ❖ वर्तनी का अर्थ
- ❖ शुद्ध वर्तनी की आवश्यकता एवं महत्त्व, वर्तनी शिक्षा के उद्देश्य
- ❖ वर्तनी अशुद्ध के प्रकार
- ❖ वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियों के कारण
- ❖ वर्तनी सम्बन्धी नियम

उद्देश्य

- ❖ हिन्दी की व्याकरणिक व्यवस्था से परिचय कराना।
- ❖ शुद्ध उच्चारण का तात्पर्य तथा महत्त्व समझाना।
- ❖ उच्चारण स्थलों तथा शुद्ध उच्चारण करने के नियमों की जानकारी प्रदान करना।

1.1 भूमिका

हिन्दी भाषा का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक है। कई राज्यों की मातृभाषा हिन्दी है। लेकिन उच्चारण में स्थानीय प्रभाव अधिक मिलता है। उत्तर प्रदेश में ही नहीं हरियाणा में भी हिन्दी उच्चारण में काफी भिन्नताएँ हैं। हिन्दी भाषी क्षेत्र राजस्थान एवं मध्य प्रदेश का क्षेत्र बड़ा होते हुए भी उच्चारण में स्थानीय प्रभाव है। स और श के उच्चारण में अन्तर नहीं कर पाते हैं। ब्रज तथा अवधी में 'श' का उच्चारण अथवा ध्वनि नहीं है। हिन्दी की शुद्ध वाचन शैली को खड़ी बोली कहते हैं। इसे सम्पूर्ण हिन्दी क्षेत्र में समझा बोला जाता है। स्थानीय भाषा को समझने में कठिनाई होती है। यथा शाप, शकुन, पाठशाला, शंकर, आदि उच्चारण में साप, सकुन, पाठसाला और संकर आदि रूप शुद्ध नहीं माने जा सकते।

1.2 शुद्ध उच्चारण से आशय

एक ही भाषा बोलने में उच्चारण भेद पाया जाता है। यह भेद क्षेत्रीय एवं भौगोलिक भिन्नता के कारण होता है क्योंकि जिस भाषा का क्षेत्र जितना व्यापक होता है उतनी ही उच्चारण भिन्नता देखने को मिलती है। हिन्दी के लिए यह तथ्य चरितार्थ होता है।

शुद्ध उच्चारण का अर्थ मानक उच्चारण से है। क्षेत्रीय उच्चारण सम्प्रेषण की दृष्टि से प्रयोग करते हैं। परन्तु उन्हें भाषा और लेखन की दृष्टि शुद्ध नहीं मानते हैं। हिन्दी की खड़ी बोली को शुद्ध उच्चारण या मानक कहते हैं। सर्वमान्य उच्चारण को मानक उच्चारण या शुद्ध उच्चारण कहते हैं।

शुद्ध उच्चारण में ध्वनियों की अनुतान, लय, यति, गति का ध्यान रखते हुए भाषा का प्रयोग करते हैं, तभी शुद्ध उच्चारण की पहचान होती है। रागात्मक अभिलक्षणों का शिक्षण देना अति आवश्यक होता है।

1.3 उच्चारण का महत्व

किसी भी भाषा में उच्चारण का महत्व अत्यधिक होता है। शुद्ध उच्चारण ही भाषा विशेष के ज्ञान का प्रथम चरण या अध्याय होता है। हिन्दी भाषा, उन्नति के शिखर पर अग्रसर होती रही है और इसके राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित होने से इसका महत्व और भी बढ़ गया है। इसलिए शुद्ध और समृद्ध, सर्वप्रिय तथा सर्वजन ग्राह्य बनाने के लिए उच्चारण की शुद्धता की ओर ध्यान देना आवश्यक है। **उदाहरणार्थ–** यदि कोई व्यक्ति ''आपत्ति काल में स्वजनों ने मेरी सहायता की।'' के स्थान पर ''आफत काल में शवजनों ने मेरी साता की।'' बहुधा देखा गया है कि शुद्ध उच्चारण न कर सकने के कारण हम उपहास के पात्र बन जाते हैं। कहे तो यह अर्थ का अनर्थ होगा।

भाषा के अन्तर्गत व्याकरण से कहीं अधिक महत्व उच्चारण का होता है। शुद्ध उच्चारण किया गया वाक्य व्याकरण असम्मत होने पर भी अर्थ प्रदान करता है। जबकि व्याकरण सम्मत वाक्य अशुद्ध उच्चारण करने पर अपूर्ण माना जाता है। क्योंकि श्रोता उसे समझ नहीं पाते अथवा प्रयत्न करके ही अर्थ समझ पाते हैं।

शुद्ध उच्चारण भाषा का आवश्यक अंग है। भाषा में सम्प्रेषण का प्रमुख माध्यम है।

शुद्ध उच्चारण से सम्प्रेषण में बोधगम्यता आती है। शुद्ध उच्चारण से भाषा परिष्कृत होती है।

1.4 उच्चारण की सामान्य अशुद्धियाँ

अशुद्ध उच्चारण के प्रकारों के विभाजन में सामान्यत: मिलने वाली अशुद्धियों का विवरण यहाँ दिया जा रहा है।

(i) वर्णमाला के उच्चारण में 'अ' को 'आ' अथवा 'अँ' बोलते हैं। क, ख, ग, घ आदि को कभी-कभी का, खा, गा, घा या कै, खै, गै, घै बोलते हैं।

(ii) 'छ' को 'श' बोलते हैं।

जैसे—'मछली' को 'मशली'।

'छ' को 'च' कहते हैं।

जैसे—'छोटे' को 'चोटे'

'छ' को 'क्ष' भी कहते हैं।

जैसे—'छात्र' को 'क्षात्र'।

(iii) 'ड' और 'ढ' में विशेष अन्तर नहीं करते।

जैसे—'पढ़ना' को 'पड़ना'।

'सड़ना' को 'सरना'।

(iv) 'त' को 'थ' कहते हैं।

जैसे—'भरत' को 'भरथ'।

इसी प्रकार 'घ' को 'त' कहते हैं।

जैसे—'दशरथ' को 'दशरत'

(v) 'ब' को 'व' कहते हैं।

जैसे—'बाइबिल' को 'वाइविल'

(vi) 'ढ' को 'ट' भी कहते हैं।

जैसे–ढोलक को टोलक।

(vii) 'द' को 'ध' कहते हैं।

जैसे—विद्यार्थी को विध्यार्थी।

(viii) 'स' को 'श' भी कहते हैं।

जैसे—'सुशील' को 'शुशील' और 'सुशोभित' को 'शुशोभित', 'रासबिहारी' को 'राशबिहारी' और 'रसगुल्ला' को 'रशगुल्ला'।

(ix) 'ड' और 'ढ' में विशेष अन्तर नहीं करते।

जैसे—'गड्ढा' को 'गड्डा'।

(x) 'ण' को 'न' या ड कहते हैं।

जैसे—'रावण' को 'रावन' और 'वर्णन' को 'वर्नन', 'कारण' को 'कारड़'।

(xi) 'न' को 'ण' कहते हैं।

जैसे—'जाना' को 'जाणा' और 'पानी' को 'पाणी'।

(xii) 'व' को 'ब' कहते हैं।

जैसे—'वन' को 'बन' और 'विषय' को 'बिषय'।

(xiii) 'क्ष' को 'छ' कहते हैं।

जैसे—'क्षत्रिय' को 'छत्रिय'।

1.5 अशुद्ध उच्चारण के कारण

भाषा में अशुद्ध उच्चारण के अनेक कारण होते हैं। यहाँ पर कुछ प्रमुख कारण निम्न है—

(i) यदि शिक्षक का उच्चारण शुद्ध नहीं है तब बालक भी उसका अनुकरण करते हैं और उच्चारण अशुद्ध होता है।

(ii) बालक के वाचन के दोष या उसकी असमर्थता भी अशुद्ध उच्चारण का कारण होती है। हकलाने के कारण शुद्ध उच्चारण नहीं कर पाते हैं।

(iii) क्षेत्रीय भाषाओं के प्रभाव के कारण भी उच्चारण अशुद्ध होता है।

(iv) पुस्तक के मुद्रण में अशुद्धियाँ होती हैं। छात्र उनका अध्ययन करता है और अशुद्ध उच्चारण करता है।

(v) अज्ञानता के कारण उच्चारण दोष आ जाता है। जिसे शुद्ध उच्चारण सुनने को नहीं मिला वह शुद्ध उच्चारण नहीं कर सकता।

(vi) हिन्दी के कुछ शब्दों में विदेशी शब्द आ जाने पर अक्षर के अनुरूप ध्वनि नहीं होती जिसके फलस्वरूप उच्चारण अशुद्ध हो जाता है। जैसे 'स्टेशन' को 'इस्टेशन', स्पीकर को इस्पीकर।

(vii) शिक्षकों के व्यवहार से भयभीत बालक भी शुद्ध उच्चारण नहीं कर पाते।

1.6 अशुद्ध उच्चारण के सुधार हेतु सुझाव

छात्रों को शुद्ध उच्चारण कराने हेतु मुख्य सुझाव निम्न हैं—

(i) जिन छात्रों का उच्चारण अशुद्ध है, उनका अनुकरण अन्य छात्र न करने पायें, इसका ध्यान रखा जाये।

(ii) सामूहिक उच्चारण तथा अभ्यास को अधिक महत्व देना चाहिये।

(iii) अशुद्ध उच्चारण करने वाले छात्रों से सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिए। उनका उपहास नहीं करना चाहिये।

(iv) उच्चारण प्रतियोगिताओं का आयोजन करके पुरस्कार की व्यवस्था की जाये। इससे छात्र उच्चारण सुधारने का प्रयत्न करेंगे।

(v) यदि सुविधायें उपलब्ध हों तो तकनीकी माध्यमों तथा साधनों का प्रयोग किया जाना चाहिये।

(vi) उच्चारण सुधार का प्रयास प्रारम्भिक स्तर से ही होना चाहिए। प्रारम्भ में उच्चारण अशुद्ध हो जाने पर बाद की कक्षाओं में सुधारना कठिन हो जाता है।

1.7 उच्चारण सम्बन्धी कुछ नियम

उच्चारण सम्बन्धी नियम निम्न हैं—

(1) हिन्दी वर्णमाला का समुचित ज्ञान होना।

(2) ध्वनियों के उच्चारण-स्थान का ज्ञान उच्चारण सीखने में सहायक होता है।

(3) उच्चारण की दृष्टि से पाँचों वर्गों के अन्तिम अक्षर अनुनासिक हैं। अनुनासिक वर्णों के उच्चारण में नासिका का भी प्रयोग किया जाता है।

(4) आदर्श अनुकरण विधि का प्रयोग करना।

(5) शब्द विश्लेषण विधि का प्रयोग करना अर्थात खण्डों में उच्चारण कराना।

(6) ईकार-ऊकार सम्बन्धी अशुद्धियों का बोध कराना।

(7) स्वर भक्ति, स्वर लोप, स्वरागम सम्बन्धी अशुद्धियों पर ध्यान देना।

(8) ऋ को रि के रूप में बोला जाता है, जैसे ऋषि, ऋतु आदि।

(9) द्य का उच्चारण द्रय के रूप में होता है न कि ध्य या द के रूप में।

(10) एकाधिकार अक्षर वाले शब्दों में यदि सभी अक्षर ह्रस्व हों तो अन्तिम अक्षर से पूर्व के अक्षर पर बलाघात होता है, जैसे—कमल व अगणित में क व ग।

(11) अशुद्ध वर्ण विपर्यय या शब्दांश विर्पमय का बोध होना।

1.8 शुद्ध वर्तनी का अर्थ

वर्तनी का अर्थ अक्षरों को सुडौल तथा सुन्दर लिखने से नहीं होता है अपितु शब्दों में निहित अक्षरों या वर्णों को शुद्ध रूप में तथा सही क्रम में लिखा जाये। शुद्ध वर्तनी भाषा का एक शुद्ध रूप प्रस्तुत करती है। शुद्ध वर्तनी का प्रभाव गठन, उच्चारण तथा रचनागत अन्य रूपों पर पड़ता है।

1.9 शुद्ध वर्तनी की आवश्यकता और महत्व

भाषा की दृष्टि से शुद्ध वर्तनी का विशेष महत्व है क्योंकि भाषा का शुद्ध रूप वर्तनी के माध्यम से ही प्रस्तुत किया जा सकता है।

(i) भाषा शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति शुद्ध वर्तनी से ही की जा सकती है।

(ii) यज्ञों में मंत्रों के शुद्ध उच्चारण तभी सम्भव हो पाते हैं जब मंत्रों की वर्तनी शुद्ध लिखी गई हो।

(iii) भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति एवं सम्प्रेषण में वर्तनी का अधिक महत्व है।

(iv) भाषा की शुद्धता वर्तनी पर ही आधारित होती है क्योंकि लेखन सम्प्रेषण स्थायी माध्यम होता है।

1.10 वर्तनी अशुद्धि के प्रकार

वर्तनी में अशुद्धियाँ निम्न प्रकार की होती हैं—

(क) सामान्य लिपि सम्बन्धी अशुद्धियाँ

(i) ष के स्थान पर प लिख देने की अशुद्धि; जैसे—विषय का विपय, षट् का पट आदि।

(ii) ब के स्थान पर व लिख देने की अशुद्धि; जैसे—बहुत का वहुत, अब का अव आदि।

(iii) ठ के स्थान पर ट लिख देना; जैसे—षष्ठ का षष्ट, पृष्ठ का पृष्ट।

(iv) द्य के स्थान पर ध्य अथवा ध लिख देना; जैसे—विद्यमान का विध्यमान, मद्य का मध्य आदि।

(v) भ के स्थान पर म लिख देना; जैसे—भक्ति का मक्ति तभी का तमी, कभी का कमी आदि।

(vi) क्त (कत) के स्थान पर त्त लिख देना, जैसे—संयुक्त का संयुत्त, भक्त का भत्त आदि।

(vii) ध के स्थान घ लिख देना; जैसे—धनुष की जगह घनुष, धैर्य का घैर्य आदि।

(viii) श, ष तथा स की अशुद्धि; जैसे—मनुष्यता का मनुश्यता, आकर्षक का आकस्त्रक, सुशील का शुसील आदि।

(ix) छ के स्थान क्ष लिख देना; जैसे—छात्र का क्षात्र, छत्र का क्षत्र आदि।

(x) ण के स्थान पर न लिख देना; जैसे—लक्ष्मण का लक्ष्मन, कारण का कारन, वेणी का वेनी, गणना का गनना, करूणा से करूना।

(ख) पंचम वर्ण सम्बन्धी अशुद्धियाँ–बहुत से विद्वान इस पक्ष में हैं कि वर्णों का पंचम वर्ण ही अनुस्वार के स्थान पर प्रयुक्त किया जाये; जैसे—अङ्क का अंक, पन्चम का पंचम, खण्ड का खंड, सुन्दर का सुंदर, अन्धकार का अंधकार आदि।

अनुस्वार सम्बन्धी अशुद्धियाँ

(i) अनुस्वार का न लगाना; जैसे—नहीं का नही, मैं का मैं उन्होंने का उन्होने।

(ii) अनुस्वार को बाद के वर्ण पर लगाना; जैसे—उन्होंने का उन्होनें, अंकित का अकिंत, आदि।

(iii) हलन्त न लगाना; जैसे—

पश्चात् का पश्चात, महान् का महान, कदाचित् का कदाचित अर्थात् का अर्थात, आदि।

(ग) मात्राओं की अशुद्धियाँ

(1) मात्रा का अभाव आवश्यकता होने पर भी मात्रा न लगाना; जैसे—

गृहिणी का गृहणी, दीक्षित का दीक्षत, भण्डार का भंडार, आदि।

(2) मात्रा को उलट फेर कर लगाना; जैसे—निश्चित का निश्चित रचयिता का रचियता आदि।

(3) मात्राधिक्य : आवश्यकता न होने पर भी मात्रा लगा देना; जैसे—अधीन का आधीन, वादविवाद का वादाविवाद, भये का भाये आदि।

(4) ह्रस्व के स्थान पर दीर्घ कर देना; जैसे—हरि का हरी, किन्तु का किन्तू, वाल्मीकि का बाल्मीकी आदि।

(5) दीर्घ के स्थान पर ह्रस्व कर देना; जैसे—श्रीमती का श्रीमति बादाम का बदाम, परीक्षा का परिक्षा, आदि।

(घ) **अक्षरों की अशुद्धियाँ**

(1) **अक्षर विपर्यय:** अक्षर को उलटकर रख देना; जैसे—मतलब का मतबल, लखनऊ का नखलऊ, नुस्खा का नुखसा, चिह्न का चिन्ह, आदि।

(2) **अक्षरागः** अधिक अक्षर लगा देना; जैसे—बुधवार का बुद्धवार, लिखा का लिक्खा, फजूल का बेफजूल, आदि।

(3) **अक्षर का लोप,** अक्षर का लोप हो जाना, जैसे—राजकीय का राजकी, नारकीय का नारकी, चित्त का चित, कवयित्री का कवित्री, आदि।

(4) **विसर्ग का लोप;** जैसे—दुःख का दुख, क्रमशः का क्रमश शनैः-शनै का शनैः-शनैः, आदि।

(5) **पूरे अक्षर का आधा लिखना और आधे का पूरा लिखना जैसे**—मर्म का मरम, भ्रम का भरम, भास्कर का भासकर आदि।

1.11 वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियों के कारण

वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियों के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं—

(1) अशुद्ध उच्चारण–यदि बालक उच्चारण अशुद्ध करेगा तो स्वाभाविक है लिखेगा भी अशुद्ध। इसका कारण यह है कि हिन्दी भाषा में जैसा बोला जाता है, वैसा ही लिखा भी जाता है। यदि कोई छात्र 'स' और 'श' का भेद नहीं करता तथा स को श और श को स बोलता है तो वह लिखने में भी यही गलती करेगा। जैसे—समस्या को समश्या 'शिकार' को 'सिकार'।

(2) चन्द्रबिन्दु तथा अनुस्वार–प्राय: बच्चों को अनुनासिक तथा अनुस्वार के प्रयोग का स्पष्ट ज्ञान नहीं होता अत: वर्तनी में अशुद्धियाँ हो जाती हैं, उदाहरण के लिये पतंग के लिये पतँग तथा चाँद के लिये चांद।

(3) लिपि की अपूर्ण जानकारी–लिपि की अपूर्ण जानकारी भी वर्तनी को अशुद्ध करती है। यदि बालकों को 'स' 'श' और 'ष' का प्रयोग स्पष्ट नहीं है, अथवा मात्राओं या रेफ का ज्ञान नहीं है तो वे गलत लिखेंगे। उदाहरण के लिये—रचयिता को रचियता तथा दुर्गति को दुगर्ति, आदि।

(5) अनुनासिक तथा अनुस्वार–प्राय: बच्चों को अनुनासिक तथा अनुस्वार का भी स्पष्ट भेद ज्ञात नहीं होता, अत: वे लिखने में अशुद्धियाँ करते हैं, जैसे—'कलंक' को 'कलन्क', सम्बन्ध को संबंध, आदि।

(4) प्रान्तीय भाषा–भाषा का उच्चारण प्रान्तीयता से प्रभावित होता है। उदाहरण के लिये, पंजाब में हिन्दी का उच्चारण उत्तर प्रदेश की अपेक्षा सर्वथा भिन्न है। अत: लिखते समय उच्चारण भिन्न होने के कारण वर्तनी भी भिन्न तथा अशुद्ध हो जायेगी। उदाहरण के लिये पंजाबी में राजेन्द्र को राजिन्द्र, सुरेन्द्र को सुरिन्द्र, भाई को पाई, कृपाल को किरपाल कहा जाता है।

(6) उर्दू तथा अन्य भाषाओं का प्रयोग–उर्दू तथा अंग्रेजी के प्रभाव के परिणामस्वरूप हम वर्तनी की अनेक अशुद्धियाँ करते हैं, जैसे उर्दू के प्रभाव के कारण कृपाल को किरपाल ओर अंग्रेजी से प्रभावित होकर गुप्त को गुप्ता लिखते हैं।

(7) व्याकरण की अनभिज्ञता–हिन्दी वर्तनी में बहुत-सी अशुद्धियाँ हिन्दी भाषा की व्याकरण की अनभिज्ञता के कारण होती हैं। शब्द-रचना सन्धि और समास के नियमों का ज्ञान न होने से अधिक अशुद्धियाँ दृष्टिगोचर होती हैं।

(8) संयुक्ताक्षरों का प्रयोग–संयुक्ताक्षर देव नागरी लिपि की विशेषता है। इस लिपि में ध्वनि छोटी होने पर लिपि संकेत भी छोटा हो जाता है। हिन्दी में लगभग 150 संयुक्त ध्वनियाँ हैं। संयोग के नियम का ज्ञान न होने से इसमें अधिक त्रुटियाँ होती हैं।

1.12 वर्तनी सम्बन्धी नियम

वर्तनी की अशुद्धियों को दूर करने के लिए निम्न नियम कारगर हो सकते हैं—

1. दीर्घ स्वर की मात्राओं के साथ चन्द्र बिन्दु को भी अनुस्वार की भाँति ही लिखते हैं; जैसे—हैं, मैं आदि।

2. हिन्दी क्रियाओं का अन्तिम अक्षर 'ती' सदा दीर्घ होता है जैसे—जाती, हँसती, खाती, खेलती आदि।

3. प्रार्थना या विधि के क्रिया रूपों के अन्त में ए है, न कि ये; जैसे—उठिए, बैठिए, कीजिए आदि।

4. उकारान्त और ऊकारान्त शब्दों के बहुवचन में स्वर लिखा जाता है; जैसे—गुरुओं, शिशुओं, भालुओं, बुद्धुओं, आदि।

5. जब किसी आधे अक्षर को पूरा र मिलता है तो उस आधे अक्षर को लिखकर एक तिरछी (/) रेखा लगा देते हैं; जैसे—क्रम, भ्रम, प्रसंग आदि।

6. न् और म् के स्थान पर यथासम्भव ं और ं लिखना चाहिए।

7. भूतकाल की वे क्रियाएँ जिनके पुल्लिग में 'या' है, उनके स्त्रीलिंग रूप 'ई' और 'यी' दोनों शुद्ध हैं; जैसे—गयी, आयी, लायी तथा गई, आई, लाई आदि।

8. क और त का संयोग क्त, क्त दोनों रूपों में होता है। जैसे—भक्त, भक्त, शक्ति, शक्ति आदि।

9. क, फ को क् और फ् के रूप में आधा लिखते हैं।

10. 'वह' का बहुवचन वे है न कि वो।

11. 'श' और 'र' का संयोग होने पर 'श्र' बनता है।

12. यदि आधा 'र' किसी पूरे अक्षर में मिलता है तो उस अक्षर के ऊपर रेफ लगा देते हें; जैसे—मर्म, मार्ग, कर्म, धर्म आदि।

13. जब किसी संज्ञा शब्द में 'इक' प्रत्यय जोड़ते हैं तो उसके आदि के 'अ' स्वर को दीर्घ कर देते हैं; जैसे—समाज से सामाजिक, व्यवहार से व्यवहारिक, स्वभाव से स्वाभाविक, आदि।

14. इकारान्त शब्दों के बहुवचन में ई को ह्रस्व करके उसके आगे याँ या यों लगा देते हैं, जैसे—मक्खी से मक्खियों, स्त्री से स्त्रियों, नारी से नारियों, आदि, किन्तु सम्बोधन में अनुस्वार नहीं रहेगा; जैसे—भाइयो, देवियो आदि।

15. आकारान्त शब्दों के बहुवचन में एँ आता है; न कि यें; जैसे—बालिका से बालिकाएँ, लता से लताएँ, महिला से महिलाएँ, आदि।

16. सर्वनाम और विभक्ति के बीच 'ही', 'तक' आदि का यदि निपात हो तो विभक्ति को पृथक् लिखा जाए; जैसे—आप ही के लिए, उन् तक को।

17. सर्वनामों में विभक्ति चिन्ह साथ लिखे जाएँ; जैसे—मुझको, उससे, आपसे, आदि।

18. सर्वनामों में यदि दो विभक्ति चिन्ह हों तो पहले को मिलाकर लिखा जाए तथा दूसरे को पृथक; जैसे—उसके लिए, इनमें से।

19. अकारान्त शब्दों के बहुवचन ओकारान्त रूप में सदा अनुस्वार रहता है; जैसे—पुस्तकों, लड़कों, कबूतरों आदि।

20. 'कि' संयोजक अव्यय है और 'की' सम्बन्धकारक का चिन्ह है; जैसे—श्याम ने कहा कि राधा की वाणी मधुर है।

21. हिन्दी के विभक्ति चिन्ह प्रतिपादिक से पृथक लिखे जाएँ; जैसे—राम ने, रावण को।

22. अनुस्वार का चिन्ह (ं) पृथक है और अर्द्ध अनुस्वार या चन्द्र बिन्दु का चिन्ह (ँ) पृथक है। अंगना और अँगना, हंस ओर हँस, गूंजा और गूँजा में वर्तनी भेद से उच्चारण अन्तर के साथ अर्थ में भी अन्तर हो गया है। चन्द्र बिन्दु आधा अनुस्वार है।

23. 'क' ओर 'त' का संयोग 'क्त', क्त दोनों रूपों में होता है; जैसे—भक्त, भक्त आदि।

24. आज्ञा बोधक आकारान्त धातुओं में स्वर लिखते हैं; जैसे—आओ, खाओ, जाइए, आइए, आदि।

25. अरबी-फारसी मूल के वे शब्द जो हिन्दी के अंग बन चुके हें उन्हें हिन्दी रूप में ही स्वीकार किया जाए; जैसे—'ज़रूर' न कि जरूर।

26. विसर्ग केवल तत्सम शब्दों में प्रयुक्त होता है। हिन्दी के अपने शब्दों में नहीं। अत: छः को छह लिखना तर्क संगत है।

निष्कर्ष—किसी भी भाषा में उच्चारण की सर्वाधिक महत्ता होती है। अशुद्ध उच्चारण से अर्थ का अनर्थ हो सकता है। अत: शिक्षा में उच्चारण का महत्व प्राथमिक स्तर से वांछनीय है। उच्चारण जितना स्पष्ट होगा भाषा की लयता उतनी उत्कृष्ट होगी।

प्रश्न

1. शुद्ध उच्चारण से क्या तात्पर्य है ?
2. शुद्ध उच्चारण के महत्व का उल्लेख कीजिए?
3. उच्चारण की सामान्य अशुद्धियों पर प्रकाश डालिए।
4. अशुद्ध उच्चारण को शुद्ध करने के कौन-कौन से उपाय किए जा सकते हैं ?

□

अध्याय

8

व्याकरण शिक्षण

संरचना

- ❖ उद्देश्य
- ❖ भूमिका
- ❖ व्याकरण का अर्थ एवं परिभाषा
- ❖ व्याकरण की विशेषताएँ
- ❖ व्याकरण की आवश्यकता
- ❖ व्याकरण के उद्देश्य
- ❖ व्याकरण के प्रकार
- ❖ व्याकरण की विधियाँ या प्रणालियाँ

उद्देश्य

- ❖ व्याकरण के नियमों से परिचय।
- ❖ व्याकरण का अर्थ-विशेषता एवं आवश्यकता का ज्ञान
- ❖ व्याकरण के विभिन्न प्रकारों से परिचय।

1.1 भूमिका

भाषा की सुन्दरता के लिए शब्द शक्तियों (अभिधा, लक्षणा, व्यंजना) गुणों (ओज, माधुर्य, प्रसाद), रीतियों (वैदर्भी, गौड़ी, पांचाली) आदि अलंकारों का होना आवश्यक है। इसके विपरीत, भाषा-विज्ञान की अज्ञानता, बल-प्रयोग, पीढ़ी और स्थान परिवर्तन, भावावेश, सादृश्य तथा व्यक्तिगत भिन्नताओं के कारण भाषा में अनेक प्रकार के दोष उत्पन्न हो जाते हैं जिनको दूर कर भाषा में सुन्दरता लाना ही व्याकरण का कार्य है।

1.12 व्याकरण का अर्थ एवं परिभाषा

व्याकरण की शाब्दिक उत्पत्ति वि + आ + कृ धातु + ल्युट प्रत्यय के रूप में जानी जाती है। इसका अर्थ है—**व्याक्रियन्ते (व्युत्याद्यन्ते) शब्दायेन** अर्थात् जिसके द्वारा अर्थ स्वरूप से शब्द सिद्धि है। पतंजलि ने महाभाष्य में व्याकरण को 'शब्दानुशासन' कहा है। यह भाषा का शासक न होकर 'अनुशासक' है अर्थात् इसके द्वारा भाषा को व्यवस्थित किया जाता है।

विद्वानों ने व्याकरण की परिभाषा विभिन्न रूपों में की है। यहाँ पर कुछ महत्वपूर्ण व्याकरण की परिभाषाएँ दी गई हैं—

डॉ० स्वीट के मतानुसार–व्याकरण भाषा का व्यावहारिक विश्लेषण है अर्थात् उसका शरीर विज्ञान है।

लेनार्ड ब्लूम फील्ड के अनुसार–भाषा के रूप की सार्थक एवं शुद्ध व्यवस्था ही व्याकरण है।

"The meaningful arrangement of form in a language constitutes its grammar."

अर्थात् बिना व्याकरण के पढ़ना, टूटी हुई नाव से नदी पार करना, बिना पथ्य के दवा ग्रहण करना, तीनों के करने से न करना अच्छा है।

1.3 व्याकरण की विशेषताएँ

व्याकरण की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

1. गद्य साहित्य का आधार व्याकरण है।
2. यह भाषा का शरीर विज्ञान है तथा व्यावहारिक विश्लेषण करता है।
3. व्याकरण वास्तव में शब्दानुशासन है।
4. व्याकरण भाषा की शुद्धता का साधन है साध्य नहीं है।
5. व्याकरण भाषा का अंगरक्षक और अनुशासक है।
6. भाषा की पूर्णता के लिए—पढ़ना, लिखना, बोलना तथा सुनना चारों की शुद्धता व्याकरण के नियमों में आती है।
7. व्याकरण से भाषा की मितव्ययता होती है।
8. वाक्य की संरचना शुद्धता उस भाषा की व्याकरण से आती है।

1.4 व्याकरण की आवश्यकता

व्याकरण शिक्षा भाषा-शिक्षण का आवश्यक सशक्त एवं महत्वपूर्ण अंग है। व्याकरण भाषा का दिशा निर्देशन करता है। व्याकरण उसे सरलता से अपेक्षित लक्ष्य तक पहुँचाता है। व्याकरण के नियमों का ज्ञान छात्रों में 'मौलिक' वाक्य रचना की योग्यता का विकास करता है। व्याकरण छात्रों में भाषा को शुद्ध लिखने, बोलने के कौशल का विकास करती है।

भाषा के शुद्ध रूप पहचानने में छात्रों को सक्षम बनाना ही व्याकरण का मुख्य उद्देश्य है। व्याकरण शिक्षा से मातृभाषा के प्रयोग, बोलने-लिखने में शुद्धता आती है। मातृभाषा में व्याकरण के प्रयोग से स्पष्ट एवं शुद्ध व्यवहार रहता है। शुद्ध संप्रेषण व्याकरण के प्रयोग पर निर्भर होता है।

भाई योगेन्द्र जीत के शब्दों में–सार रूप में प्रचलित भाषा से सम्बन्धित नियमों का कथन करना ही व्याकरण है।

1.5 व्याकरण के उद्देश्य

पंडित लज्जा शंकर झा ने लिखा है–भाषा का शुद्ध रूप पहचानने में छात्रों को सक्षम व समर्थ बनाना ही व्याकरण का उद्देश्य है। इस प्रकार व्याकरण से शुद्ध बोलना और लिखना आता है।

चैम्पियन के मतानुसार–व्याकरण के नियमों का ज्ञान, छात्रों में मौलिक वाक्य बनाने की योग्यता उत्पन्न करता है। मितव्ययता के आधार हेतु व्याकरण का ज्ञान आवश्यक है। यह छात्रों में शुद्ध रूप से बोलने एवं लिखने की क्षमता पैदा करता है।

व्याकरण शिक्षण के उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. ज्ञान–(i) छात्रों को ध्वनियों, ध्वनियों के अंतर, शब्द योजना, शब्द शक्तियों व छन्द, अलंकार एवं रसों का ज्ञान कराना।

(ii) छात्रों को शब्दों के शुद्ध रूप एवं उनकी शुद्ध वर्तनी व वाक्य रचना के नियमों का ज्ञान कराना।

(iii) छात्रों को साहित्य की विभिन्न विधाओं एवं विभिन्न लेखन शैलियों का ज्ञान देना।

2. कौशल–(i) छात्रों को शब्दों, लोकोक्तियों, मुहावरों एवं सूक्तियों का प्रसंगानुकूल अर्थ निकालने की क्षमता प्रदान करना।

(ii) छात्रों को बोलने में भाषा के सर्वमान्य रूप का प्रयोग करने योग्य बनाना।

(iii) उनकी शुद्ध वर्तनी लिखने, शुद्ध वाक्य रचना करने तथा विराम-चिन्हों का सही प्रयोग करने के योग्य बनाना।

3. रुचि–(i) छात्रों में शुद्ध भाषा सीखने और उसको प्रयोग में लाने की रुचि उत्पन्न करना।

(ii) उनमें भाषा के गुण-दोष परखने की रुचि उत्पन्न करना।

4. अभिवृत्ति–(i) छात्रों में व्याकरण सम्मत भाषा के प्रति आदर एवं सम्मान का भाव विकसित करना।

(ii) उनमें भाषा एवं साहित्य की समीक्षा करने की अभिव्यक्ति का विकास करना।

1.6 व्याकरण के प्रकार

इस व्याकरण के नियमों में अनुसरण की अपेक्षा **व्यावहारिकता** अथवा प्रचलन को महत्व दिया गया है। इस प्रकार आज व्याकरण के तीन प्रकार हैं—

(क) शास्त्रीय या सैद्धान्तिक व्याकरण (Classical or Theoretical Grammar)—विद्वानों ने वाक्य रचना, ध्वनि, स्वर, आदि के व्याकरण के नियमों और सिद्धान्तों की रचना की है। उनका ज्ञान छात्रों को दिया जाता है। साथ ही उनके प्रयोगों को उदाहरणों से स्पष्ट किया जाता है। छात्र को भी अवसर दिया जाता है कि वह भी वाक्य रचना में उसका प्रयोग करे तथा वाक्य की संरचना में घटकों—कर्त्ता, क्रिया, कर्म, विशेषण, संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया-विशेषण की पहचान करे। व्याकरण के नियमों का महत्व तथा भाषा की शुद्धता को प्राथमिकता दी जाती है।

(ख) व्यावहारिक व्याकरण (Functional Grammar)—इस व्याकरण के स्वरूप का विकास **चौमस्की** ने किया , जिसमें नियमों की अपेक्षा व्यावहारिकता को अधिक महत्व दिया गया है। मातृभाषा के बोलने में व्याकरण के नियमों का प्रयोग बहुत कम होता है। जबकि संप्रेषण, बोधगम्य तथा मितव्ययी होता है।

(ग) प्रासंगिक व्याकरण (Incidental Grammar)—इस प्रकार के व्याकरण में शुद्ध स्पष्ट अभिव्यक्ति पर बल दिया जाता है। इसमें भाषा की दृष्टि से अशुद्धियाँ रहती हैं परन्तु अपेक्षाकृत कम ही रहती हैं। गद्य साहित्य कहानीकार, नाटककार, उपन्यासकार, भाषा की शुद्धता पर ध्यान नहीं देते हैं अपितु संप्रेषण, प्रभावशीलता एवं अभिव्यक्ति पर विशेष ध्यान देते हैं।

1.7 व्याकरण की विधियाँ या प्रणालियाँ

व्याकरण के लिए निम्नलिखित विधियों का प्रयोग किया जाता है—

(अ) निगमन विधि (Deductive Method)—इस विधि को नियम उदाहरण विधि भी कहते हैं। इसमें नियम को पूर्ण रूप से प्रस्तुत करके उदाहरण को अपूर्ण रूप में रखकर छात्रों से पूर्ति कराते हैं या उदाहरण से स्पष्ट करते हैं—संज्ञा के शिक्षण हेतु नियम के अंतर्गत परिभाषा सिखाते हैं।

नियम–किसी प्राणी वस्तु या स्थान के नाम का बोध जिससे होता है वही संज्ञा है।

इसके बाद छात्रों को संज्ञा के पहचानने को कहा जाता है।

उदाहरण–रानी लक्ष्मीबाई अंग्रेजों से लड़ रही है।

इस वाक्य में 'रानी लक्ष्मीबाई' तथा 'अंग्रेज' संज्ञा प्रस्तुत की गई है।

नियम–काव्य में जिन शब्दों से उसकी शोभा बढ़ती है उन्हें अलंकार कहते हैं।

उदाहरण–चारु चन्द्र की चंचल किरणें खेल रही थी जल थल में।
नगन जड़ाती ते वे नगन जड़ाती हैं।

इसमें एक शब्द दो बार प्रयुक्त किया गया है परन्तु दोनों का अर्थ अर्थात् दोनों स्थानों पर उनका कार्य भिन्न है। इससे कविता की सुन्दरता बढ़ती है। इसे अलंकार कहते हैं। इसे सूत्र भी कहते हैं।

(1) सूत्र प्रणाली–इस संस्कृत में व्याकरण पढ़ाने की यही प्रणाली प्रचलित रही है। यह प्रणाली अमनोवैज्ञानिक तथा परम्परागत संस्कृत व्याकरण शिक्षण की नकल कही जाती है, जहाँ छात्र संस्कृत में कुछ बोलने-लिखने और समझे बिना लघु कौमुदी के सूत्रों को रटना प्रारंभ कर देते हैं।

(2) पाठ्य-पुस्तक विधि–इस प्रणाली का अर्थ है कि व्याकरण की पुस्तकों द्वारा ही विद्यार्थियों को व्याकरण का ज्ञान दिया जाये। इन पुस्तकों में प्रारंभ में किसी नियम की परिभाषा दी हुई होती है। फिर उस नियम को उदाहरणों द्वारा समझाया जाता है। और अन्त में पुनरावृत्ति के लिए अथवा घर से हल करके लाने के लिए कुछ प्रश्न दिए होते हैं।

(ब) आगम विधि

आगम विधि मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है। यह एक मनोवैज्ञानिक एवं स्वाभाविक विधि है क्योंकि छात्रों का ज्ञान वस्तुओं के निरीक्षण पर निर्भर होता है जिन वस्तुओं को देखता है उनके सम्बन्ध में 'क्या, क्यों तथा कैसे ?' प्रश्न करता है।

आगम विधि में तर्क का प्रयोग अधिक होता है जैसे—

(1) पुस्तक नीली है, पैन्सिल काली है, स्याही लाल है। पुस्तक, पेन्सिल तथा स्याही को व्याकरण में क्या कहते हैं ?

(2) कौटिल्य नश्वर है, पाणिनी नश्वर है, युधिष्ठिर नश्वर है, पतंजलि नश्वर है, ये सभी मनुष्य हैं—इसलिए सभी मनुष्य नश्वर हैं।

उत्तर—संज्ञा।

नीली, काली, लाल, नश्वर इन संज्ञाओं के बारे में क्या बताते हैं ?

उत्तर—विशेषता।

संज्ञा की विशेषता बताने वाले शब्द को विशेषण कहते हैं।

(स) प्रत्यक्ष भाषा शिक्षण विधि

यह व्याकरण-की उत्तम विधि मानी जाती है क्योंकि यह मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है। घर एवं परिवार में जो भाषा बोली जाती है उसे छात्र स्वाभाविक ढंग से अनुकरण के आधार पर सीखते हैं। इस प्रकार भाषा का व्याकरण भी अनुकरण द्वारा सीख लेता है। नियमों को पढ़ाने, समझाने की आवश्यकता नहीं होती।

निष्कर्ष–किसी भी भाषा को व्यवस्थित और मानक रूप-प्रदान करने के लिए व्याकरण की महती आवश्यकता है। संज्ञा, लिंग, वचन, कारक, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, काल रचना, अव्यय, समुच्चयबोधक वाक्य विचार आदि के माध्यम से भाषा को व्याकरणिक रूप प्रदान किया जाता है। इससे भाषा मानकता की ओर अग्रसर होती है।

प्रश्न

1. व्याकरण का मानव जीवन की भाषा में क्या महत्व है ?
2. व्याकरण के उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।
3. व्याकरण की आवश्यकता तथा विशेषताएँ बताइए।
4. व्याकरण की विभिन्न शिक्षण विधियों पर प्रकाश डालिए।

❑

अध्याय

9

अक्षर विन्यास

संरचना

- ❖ उद्देश्य
- ❖ भूमिका
- ❖ स्वर परिचय
- ❖ व्यञ्जन
- ❖ हिन्दी व्यंजनों का वर्गीकरण
- ❖ अक्षर
- ❖ अक्षर विभाजन का स्वरूप
- ❖ बलाघात
- ❖ बलाघात और संगम
- ❖ कुछ सामान्य अशुद्धियाँ

उद्देश्य

- ❖ अक्षरों के विभिन्न स्थानों, उच्चारण, लेखन तथा उच्चारण करने के स्थान से परिचय।
- ❖ वाचन के प्रयोगों की जानकारी कराना।

1.1 भूमिका

भाषा का आधार वर्णमाला या अक्षरमाला है। वर्णों से शब्द और शब्दों से वाक्यों की रचना होती है। वाक्य ही अभिव्यक्ति के माध्यम होते हैं। अत: किसी भी भाषा को सीखने के लिए उसकी अक्षरमाला सीखनी पड़ती है। अक्षर माला सार्थक ध्वनियों का समूह है। हिन्दी की वर्णमाला को दो वर्गों में विभाजित किया जाता है। वर्ण का अर्थ है रूप, रंग, अत:, इस दृष्टि से उसके दो रूप 'स्वर और व्यंजन' निरूपित होते हैं। इसी प्रकार अक्षर (अ + क्षर) का अर्थ है 'क्षरित न होना', 'नष्ट न होना', 'नाश रहित'। अत: वर्ण के दो रूप इस प्रकार प्रदर्शित किए जा सकते हैं—

1.2 स्वर परिचय

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ (ऋ) ए, ऐ, ओ, औ (ऑ)

टिप्पणी–(i) (ऋ)–संस्कृत से आगत शब्दों में प्राप्त 'ऋ' का उच्चारण हिन्दी में 'रि' के समान ही होता है। जैसे 'ऋण' का उच्चारण 'रिण' होता है। इसी प्रकार लिखित रूप में प्राप्त 'कृपा' का उच्चारण 'क्रिपा' ही होता है।

(ii) **(ऑ)**–यह अर्धवृत्त गोलाकार पश्च दीर्घ स्वर है जिसकी दीर्घता हिन्दी के दीर्घ 'आ' से कुछ कम है। यह अंग्रेजी से आगत शब्दों से प्राप्त होता है। जैसे—डॉक्टर, ऑफिस, कॉलेज आदि।

(iii) **('ए' और 'ओ')**–हिन्दी में दीर्घ ध्वनियाँ हैं, जिनके ह्रस्व रूप भी बोले जाते हैं, उदाहरणार्थ—'एक' और 'ओर' के 'ए', 'ओ' की तुलना में 'एक तरफा' और 'ओखली' के 'ए' और 'ओ' ह्रस्व हैं।

(iv) **(ऐ ओ)**–'य' के पूर्व 'ऐ' तथा 'व' के पूर्व 'ओ' का उच्चारण संयुक्त स्वर (क्रमशः 'अइ' और 'अउ' के रूप जैसा होता है।)

जैसे—तैयार (तइयार), कौआ (कउवा)।

(v) सभी स्वरों (ऑ को छोड़कर) के अनुनासिक रूप भी उपलब्ध है 19 जिनके ऊपर चंद्रबिन्दु का चिन्ह लगाया जाता है। जैसे—

अ	सवार	अँ	सँवार
आ	बार	आँ	बाँट
इ	विधि	इँ	विंदु
ई	कही	ई	कहीं
उ	उगली (उगल दी)	उँ	उँगली
ऊ	पूछ	ऊँ	ऊँट
ए	बढ़े	एँ	बढ़ें
ऐ	है	ऐं	हैं
ओ	गोठ	ओं	गोंद
औ	चौक	औं	चौंक

(vi) बोलचाल की भाषा में प्रायः पदान्त में ह्रस्व (इ उ) या तो कुछ दीर्घता ले लेते हैं (प्रीती, गुरु) या लुप्त हो जाते हैं (प्रीत गुर) किन्तु प्रतिष्ठित हिन्दी में इनका सही उच्चारण ही लिया जाता है। शब्दान्त में 'अ' का प्रायः, उच्चारण नहीं होता जैसे—काम्, राम्।

1.3 व्यंजन

क ख ग घ ङ
च छ ज झ (ञ)
ट ठ ड ढ ण
त थ द ध न
प फ ब भ म
य र ल व
श ष स ह
ड़ ढ़ फ़

ज़ क़ ख़ ग़

उर्दू अंग्रेजी आदि भाषाओं के शब्दों के शुद्ध उच्चारण के लिए हिन्दी भाषा में फ़, ज़, क़, ख़, ग़ का उच्चारण होता है। इनमें फ़ ज़ का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक होता है। बोलचाल की हिन्दी भाषा में, फ, ज, क ख ग क्रमशः फ़, ज़, क़, ख़ ग़ के रूप में उच्चरित होते हैं।

(क) नासिक्य व्यंजन—नासिक्य व्यंजन तथा अनुस्वार के प्रयोग के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें स्मरणीय हैं—

विकल्प	नासिक्य व्यंजन	स्वर
ङ + क, ख, ग, घ	+ म वाङ्मय	ह (संहार)
ञ + च, + छ, ज, झ		+ य (संयत संयम)
ण + ट, ठ, ड, ढ	+ ण (अक्षुण्ण) + म (मृण्मय)	
	+ य (पुण्य) + व (कण्व)	
न + त, थ, द ध	+ न (अन्न) + म (जन्म)	+ श (अंश) स (संसार)
	+ य (अन्याय) + व (अन्वय)	+ र संरचना + ल (संलग्न)
न + प, फ, ब, भ	+ म (सम्मान) + न (निम्न)	+ व (संविधान)
	+ य (साम्य) + र (नम्र)	
	+ ल (म्लान)	

क्रमांक 1 में अनुस्वार या पंचमाक्षर का प्रयोग विकल्प से होता है। क्रमांक 2 में केवल नासिक्य तथा क्रमांक 3 में केवल अनुस्वार का प्रयोग होता है।

अनुस्वार एवं अनुनासिक में अंतर–अनुस्वार एवं अनुनासिक का भेद हिन्दी में महत्वपूर्ण हैं, जैसे—हंस तथा हँस, वेदाँत, वेदांत

जिह्वा की स्थिति

जिह्वा का भाग	अग्र	मध्य	पश्च
संवृत	ई इ		उ ऊ
अर्ध संवृत	ए		ओ
अर्ध विवृत	ऐ	अ	औ (ऑ)
विवृत		अ	

1. इनमें अ, इ, उ, ह्रसव हैं और शेष दीर्घ हैं।
2. अ-आ, इ-ई, उ-ऊ केवल दीर्घता का ही भेद नहीं है, अपितु गुणात्मक (स्थान-दृढ़ता) भेद भी है।

1.4 हिन्दी व्यंजनों का वर्गीकरण

प्रयत्न ↓	स्थान →	दयोष्ठ्य	दयोष्ठ्य	दंत्य	वर्त्य	तालव्य	पूर्धन्य	कोमल तालव्य	जिह्वा मूलीय	स्वरयंत्र मुखी
स्पर्श	अघोष	प फ		त् थ्			ट् ठ्	क ख्	क	
संघोष		ब भ		द् ध्			ड् ढ	ग घ्		

स्पर्श-संघोष	अघोष			च् क्क					
संघोष				ज् झ्					
अनुनासिक संघोष		म्	न्	(त्र)	ण्	(ङ्)			
पार्श्विक	संघोष		ल्						
लुठित	संघोष		र						
उत्क्षिप्त	संघोष				ड्	ढ्			
संघर्षी	अघोष	फ	स्	श्			ख्		
संघोष			ज्				ग्	है	
अद्ध-स्वर		व्		य्					

व्यंजन गुच्छ आदि स्थिति में

क क्य (क्यारी), क्व (क्वारा), क्र (क्रम)

ख ख्य (ख्याति, ख्व (ख्वाब)

ग ग्य (ग्यारह), ग्र (ग्राम), ग्ल (ग्लानि)

घ घ (घ्राण)

च च्य (च्युत)

ज जय (ज्योति), ज्व (ज्वार)

ट ट्य (ट्यूब), (ट्रेन), (अंग्रेजी शब्दों में)

ड ड्य (ड्योढी), ड्र (ड्रामा)

त त्य (त्याग), त्व (त्वचा), त्र (त्रिगुण)

द द्य (द्युति) द्व (द्वार), द्र (द्रव्य)

ध ध्व (ध्यान), ध्व (ध्वनि), ध्र (ध्रुव)

न न्य (न्याय), नृ (नृप-त्रिप)

प प्य (प्यास), प्र (प्रेम), प्ल (प्लावन), (प्लान)

ब ब्य (ब्याह), ब्र (ब्रज), ब्ल (ब्लाउज़) (अंग्रेजी शब्दों में)

भ भ्र (भ्रम)

म म्य (म्यान), मृ (मृत्यु), म्ल (म्लान)

फ फ्र (फ्राक) (केवल अंग्रेजी शब्दों में)

व व्य (व्यक्त), वृ (वृत्त)

स स्क (स्कंध), स्ख (स्खलन), स्ट (स्टेशन-अ), स्त (स्तन), स्फ (स्फूर्ति), स्म (स्मारक), स्य (स्याल), स्र (स्रोत), स्ल (स्लेट अं), स्व (स्वतन्त्र)

ज ज्यादा

श श्य (श्याम), श्व (श्वेत), श्र (श्री)

ह ह्व (ह्वेल-अं)

टिप्पणी–स से आरंभ होने वाले व्यंजन गुच्छों से पूर्व किंचित इ या अ का उच्चारण होता है। जैसे—**स्टेशन**–इस्टेशन, **स्तन**–(इ) स्तन या (अ) स्तन।

मध्य एवं अंत्य स्थिति–मध्य तथा अंत्य स्थिति में भी अनेक व्यंजन-गुच्छ मिलते हैं।

टिप्पणी–(1) व्यंजन + य तथा व्यंजन + व के गुच्छ (कुछ स्थितियों में व्यंजन + र के गुच्छ) जब मध्य एवं अंत्य स्थिति में (किसी स्वर के पश्चात्) आते हैं तो य तथा व के पूर्ववर्ती व्यंजन का उच्चारण द्वित्व के रूप में होता है, जैसे—

उपन्यास	उपन्न्यास
अन्य	अन्न्य
साम्य	साम्म्य
अद्वितीय	अद्द्वितीय
ममत्व	ममत्त्व

(2) मध्य तथा अन्त्य स्थिति में दो तरह के व्यंजन—संयोग मिलते हैं—(सम्राट अम्लान) व्यंजन गुच्छ तथा व्यंजन संयोग।

(i) व्यंजन गुच्छ–संत मार्ग।

(ii) व्यंजन संयोग–जनता (जन्ता), उलटा (उल्टा), गलती (गल्ती)।

व्यंजन-गुच्छों को गुच्छ के रूप में ही लिखना चाहिए जबकि व्यंजन-संयोगों में व्यंजनों को अलग-अलग लिखना चाहिए। व्यंजन संयोग का पता लगाने के लिए उस पर अर्थ प्रधान बलाघात (Logical stress) देना चाहिए। अगर वह गुच्छ इस स्थिति में स्वत: टूट जाये तो उसे व्यंजन-संयोग ही मानना चाहिए। उदाहरण के लिए, जनता (जन्ता) में अर्थप्रधान बलाघात देने पर उच्चारण जनता होगा, न कि जन्ता।

अक्षर (Syllable)

भाषा के उच्चारण-प्रवाह में एक स्वर अथवा व्यंजन युक्त स्वर का जो उच्चरित खंड स्पष्ट तथा पृथक् प्रतीत होता है उसे अक्षर कहते हैं। 'अक्षर' कोरा स्वर, स्वर या अनुनासिकता सहित स्वर हो सकता है।

हिन्दी में अक्षर के स्वरूप मुख्यत: निम्नलिखित प्रकार के होते हैं—

1. केवल स्वतर, जैसे—'ओं', आ-ओ।
2. स्वर + व्यंजन, जैसे—अब, आज, आँख।
3. व्यंजन + स्वर, जैसे—न, खा, हाँ।
4. व्यंजन + स्वर + व्यंजन, जैसे—घर, देर, साँप।
5. व्यंजन + व्यंजन + स्वर, जैसे—क्या, क्यों।
6. व्यंजन + व्यंजन + व्यंजन + स्वर, जैसे—स्त्री।
7. व्यंजन + व्यंजन + स्वर + व्यंजन, जैसे—प्यास।
8. स्वर + व्यंजन + व्यंजन, जैसे—अन्त।

1.5 अक्षर विभाजन का स्वरूप

स्वर व्यंजन की जिन स्थितियों में हिन्दी में अक्षर-विभाजन होता है, वे इस प्रकार हैं—

स्वर-स्वर	हुआ
	खा-ई
	आ-ओ
अनुनासिक स्वरस्वर	कुं-अर् (कुंवर)
स्वर-अनुनासिक स्वर	हु-ईं
स्वर-व्यंजन	अ-ति, ल-गा-ता-र
अनुनासिक स्वर-व्यंजन	बं-धी, आं-गन

स्वर (व्यंजन) व्यंजन + व्यंजन	श (त्)-त्रु आ (श) श्रम अ (ब) म्यास	
व्यंजन-व्यंजन	खट् मल	

1.6 बलाघात

परिभाषा–'किसी शब्द के उच्चारण में अक्षर पर जो बल दिया जाता है, उसे बलाघात कहते हैं।'

यह बात ध्यान देने योग्य है कि बलाघात पूर्ण अक्षर पर होता है किसी ध्वनि पर नहीं। हिन्दी में शब्दों के उच्चारण में बलाघात है, लेकिन उसका अर्थबोधक महत्व नहीं है। अंग्रेजी आदि भाषाओं में, जिस प्रकार—मात्र बलाघात के कारण अर्थ बदल जाता है, वैसे हिन्दी में नहीं।

टिप्पणी–यदि संयुक्त व्यंजन के पूर्व आक्षरिक विभाजन आता हो तो संयुक्त व्यंजन का प्रथम कुछ दीर्घीकृत रूप ले लेता है, और वह दीर्घीकृत अंश पूर्व अक्षर के साथ उच्चरित होता है। यदि वह व्यांजन महाप्राण हुआ तो उसका दीर्घीकृत रूप अल्पप्राण होता है।

व्यंजन + व्यंजन	= व्यंजन + व्यंजन स्वर	केवल शब्द सीमा पर जैसे उजड्ड + आदमी
	= स्वर-व्यंजन + व्यंजन	आज्ञा, आश्रम, शत्रु (टिप्पणी)
	= व्यंजन-व्यंजन	शेष सभी स्थानों पर
व्यंजन व्यंजन व्यंजन	= व्यंजन + व्यंजन + व्यंजन -स्वर	केवल शब्द सीमा पर अस्त्र + आदि
	= स्वर - व्यंजन + व्यंजन + व्यंजन	केवल शब्द-सीमा पर राम की स्त्री
	= स्वर + व्यंजन - व्यंजन + व्यंजन	नासिका ध्वनि ही अधिकांशत: पहला व्यंजन होता है और वह पहले अक्षर के साथ चला जाता है।
	= स्वर व्यंजन + व्यंजन - व्यंजन	पहले अक्षर में वह व्यंजन

हिन्दी में अक्षर के बलाघात के निम्नलिखित मुख्य रूप हैं—

1. एकाक्षर के शब्दों में बलाघात स्वभावत: उसी पर होता है जैसे 'जा', 'वह'।

2. एकाधिक अक्षर वाले शब्दों में यदि सभी अक्षर ह्रस्व हों तो बलाघात, उपांत्य (अन्तिम के पूर्व) अक्षर पर होता है, जैसे—र्क-मल, अ-गणित।

विशेष–यदि ऐसे शब्द में कोई 'महाप्राण व्यंजन' अथवा ह या 'विसर्ग' आता हो तो बलाघात उस ध्वनि से युक्त अक्षरों पर पड़ता है, जैसे—कलह, वस्तुत: (वस्-तु-त:)

3. तीन अक्षर वाले शब्दों में यदि मध्य अक्षर दीर्घ हो तो बलाघात उसी पर पड़ेगा। जैसे—म-सा-ला, झू-मे-गा, स-मा-धि।

4. वाक्य में बलाघात शब्द स्तर पर भी देखा जा सकता है जैसे-

सोहन ने मोहन को डण्डे से मारा। (अर्थात् और किसी ने नहीं मोहन ने)

सोहन ने **मोहन को** डण्डे से मारा। (अर्थात् किसी और को नहीं मोहन को)

सोहन ने मोहन को **डण्डे से मारा।** (अर्थात् किसी और चीज से नहीं डण्डे से)

सोहन ने मोहन को डण्डे से **मारा।** (अर्थात् सिर्फ धमकाया, मारा नहीं)

1.7 बलाघात एवं संगम

बोलने में एक ध्वनि के बाद दूसरी ध्वनि आती जाती है। कुछ ध्वनियाँ बिलकुल एक-दूसरे के समीप आती हैं तो कुछ ध्वनियों के बीच का स्थान कुछ समय के लिए रिक्त रहता है। इस प्रकार से वाक्य के अन्त में विराम, वाक्यांशों के मध्य अल्पविराम, शब्दों के मध्य अल्पतर विराम और शब्दों के मध्य में भी अक्षरों के बीच अल्पतम विराम रहता है।

जब दो पद स्लीप आते हैं तो पहले पद का अन्त्य भाग और द्वितीय पद का आदि भाग जुड़ जाता है। यह मिलन की विधि ही संगम स्थिति है।

रोको मत, ऊपर जाने दो।
रोको, मत ऊपर जाने दो।

संगम की स्थिति बलाघात से और अधिक स्पष्ट हो जाती है। संगम युक्त शब्दों में दो पृथक शब्द होने के कारण दो स्थानों पर बलाघात होता है, जबकि संगम हीन शब्दों में बलाघात एक ही पर होता है।

निम्नलिखित उदाहरणों को देखिए—

1. सिरका = एक तरल पदार्थ। सिर का सिर + का सिर से सम्बद्ध।

2. कर का मनका डार के मन का मनका फेर।

विराम-संगम के भेद–विराम संगम का ही एक रूप है। इसके प्रमुख दो भेद हैं—

(क) पूर्ण विराम–इसके लिए पूर्ण विराम, प्रश्न वाचक या आश्चर्यसूचक चिन्ह प्रयुक्त होते हैं।

(ख) अल्पविराम–यह वाक्य के मध्य कुछ समय के विराम का द्योतक हैं इसके लिए अल्प विराम का प्रयोग होता है।

ध्वनि-विशेष की उच्चारण-प्रक्रिया में जिव्हा की तीन स्पष्ट स्थितियाँ दिखलाई पड़ती हैं—(1) आरोही-स्थिति—यह उच्चारण-प्रक्रिया के उस अंश को कहते हैं जिसमें ध्वनि-विशेष के उच्चारण के निमित्त जिव्हा अपना प्रकृत स्थान छोड़कर, उच्चारण-स्थान तक पहुँचती है। (2) स्थिर-स्थिति—उच्चारण-प्रक्रिया का वह अंश है जिसमें जिव्हा ध्वनि के उच्चारण स्थान पर रुकती है और (3) अवरोही स्थिति—उच्चारण-प्रक्रिया का वह अंश जिसमें जिव्हा उच्चारण स्थान से लेकर अपने प्रकृत-स्थान तक पहुँचती है।

उदाहरण के लिए 'त' ध्वनि की उच्चारण प्रक्रिया को ध्यान से देखें तो जिव्हा-नोक को अपने प्रकृत-स्थान से उठाकर दाँत तक पहुँचने की स्थिति को आरोही स्थिति कहा जायेगा और जब तक जिव्हानोक दाँत से स्पर्श बनाये रखती है वह स्थिर स्थिति मानी जायेगी और स्पर्श से हटकर जब तक वह फिर प्रकृत-अवस्था तक नहीं आ जाती वह प्रक्रिया, अवरोही कही जायेगी।

त की उच्चारण प्रक्रिया–लेकिन किसी वाक्य के उच्चारण की प्रक्रिया में सभी ध्वनियाँ पूर्णता के साथ स्वतन्त्र रूप में नहीं उच्चरित होतीं। अभी ध्वनि-विशेष के उच्चारण में जिव्हा स्थिर-स्थिति से हटकर प्रकृत स्थान की ओर मुड़ी नहीं कि दूसरी ध्वनि के उच्चारण के निमित्त वह बीच में ही अवरोही से आरोही की स्थिति ले लेती है। वस्तुत: संगम (Juncture) का सम्बन्ध उच्चारण प्रक्रिया के इस संक्रमण प्रक्रिया से रहता है।

सुर तथा सुर लहर–बोलने में भावों के अनुसार सुर के उतार-चढ़ाव में अन्तर आता है। सुर का यह उतार चढ़ाव ही सुर लहर है। उदाहरण के रूप में 'अच्छा' शब्द को लेते हैं। सामान्य कथन, प्रश्नवाचक आश्चर्य इन तीनों भावों को व्यक्त करने के लिए तीन प्रकार की सुर लहर का प्रयोग करेंगे।

1. सामान्य कथन — मोर का पंख **अच्छा** है।

2. प्रश्नवाचक कथन — किसी के उपरोक्त कथन कहने पर न जानने वालों का प्रश्नवाचक 'अच्छा?'

3. आश्चर्य — मोर पंख को देखकर आश्चर्य से देखता हुआ कथन (आश्चर्य में) अच्छा !

1.8 कुछ सामान्य अशुद्धियाँ

(क) श-स	देश (देस)
व-ब	वैद्य (वैद्य), वटी (बटी)
इ-ई (लोप)	शक्ति (शक्ती), भाँति (भाँत)
	शांति (शांती), लिपियाँ (लिप्याँ)
ण-न	वाणी (बानी), कण (कन)
क्ष-छ	आकांक्षा (आकांछा), परीक्षा (परीछा), क्षेत्र (क्षेत्र)
र सम्बन्धी	आग्रह (आगृह), ब्रिटिश (ब्रिटिश)
	जागृति (जाग्रति), परिक्रमा (परक्रमा, परकरना)
	आगरा (आग्रा), पत्र (पतर), दृष्टि (द्रिष्टि)
(ख) जन्म	(जनम)
स्कूल	(इस्कूल)

निष्कर्ष—वाक्य में अक्षरों का महत्व स्वयंमेव प्रतिपादित है। सुन्दर अक्षर विन्यास से वाक्य की सुन्दरता बढ़ती है। अत: भाषा का व्यवस्थित रूप सुन्दर अक्षर विन्यास से ही निर्धारित होता है।

प्रश्न

1. ''भाषा का आधार वर्णमाला है।'' इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं ?
2. अनुस्वार तथा अनुनासिक में भिन्नता स्पष्ट कीजिए।
3. व्यंजनों की वर्गीकरण तालिका बनाइए।
4. 'अक्षर' शब्द पर अपने विचारों को बतलाइये।

❑

अध्याय
10
गद्य

संरचना

- उद्देश्य
- भूमिका
- गद्य
- गद्य शिक्षण के सामान्य उद्देश्य
- मुख्य उद्देश्य
- गद्य पाठ, स्थूल एवं सूक्ष्म अध्ययन
- गद्य के विषय तथा गद्य संकलन की विशेषतायें
- गद्य का महत्त्व

उद्देश्य

- गद्य की परिभाषा एवं महत्त्व से परिचय।
- गद्य-शिक्षण के विभिन्न सोपान का ज्ञान।

1.1 भूमिका

गद्य कवियों तथा लेखकों की कसौटी है और निबन्ध गद्य की कसौटी है। भाषा का विकास निबन्धों में ही सबसे अधिक सम्भव होता है। काव्य में अलंकार, रस, पिंगल आदि के रूपों में कवियों के लिये निर्देशन तत्व होते हैं, परन्तु गद्य-रचना में लेखक स्वतन्त्र होता है। गद्य में लेखक को व्याकरण की दृष्टि के लिये क्षमा नहीं किया जाता है। व्याकरण की त्रुटि होने पर गद्य को दोषपूर्ण माना जाता है।

1.2 गद्य

ज्ञानात्मक साहित्य कविता के माध्यम से सम्भव नहीं हमारे सभी सामाजिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, राष्ट्रीय, व्यावसायिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय कार्यकाल गद्य साहित्य के माध्यम से ही सम्पन्न होते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने गद्य की परिभाषा की है—

"यदि गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है तो गद्य साहित्य की कसौटी है। भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबन्धों में ही अधिक सम्भव होता है। इसलिए गद्य शैली के विवेचक उदाहरणों के लिये निबन्ध ही चुना करते हैं।"

'गद्य कवीनां निकषं वदन्ति' उक्ति इस बात का प्रमाण है कि भाषा का जितना परिष्कृत, प्रांजल और परिनिष्ठित रूप गद्य में मिलता है, उतना पद्य में नहीं।

गद्य शब्द संस्कृत भाषा की 'गद्' धातु से बना है जिसका अर्थ होता है—स्पष्ट कहना, साहित्य-दर्पण के अनुसार 'वृत्तं बंधोज्झितं गद्यजे' अर्थात् वृत्त-बन्ध-हीन रचना गद्य है। काव्यादर्श के अनुसार 'अपाद: पद संतानो गद्यजे' अर्थात् पद समुदाय में गण-मात्र आदि के निपदं पादं का न होना गद्य है। अंग्रेजी में गद्य को 'प्रोज़' कहते हैं। प्रोज़ की परिभाषा इस तरह की गई है—'स्टेट, डाइरेक्ट, अनएडार्न्ड स्पीच' अथवा लैंग्वेज स्पोकन ऑफ

रिटन, ऐज इन आर्डिनरी, यूसेज, विदाउट मीटर ऑफ राइम। अरबी में गद्य को नस्र या 'इबारत' या नज्म का उल्टा कहा गया है। उर्दू में भी अरबी के अनुसार ही गद्य को स्पष्ट किया गया है।

ज्ञान-विज्ञान के परिचय की दृष्टि से गद्य-शिक्षण का विशेष महत्व नहीं है क्योंकि इसके माध्यम से जीवन और जगत के सभी पक्षों का ज्ञान बालकों को प्राप्त होता है। विषय सामग्री की जितनी विविधता गद्य साहित्य में सम्भव है, उतनी कविता में सम्भव नहीं। ज्ञानोपलब्धि का साधन तो गद्य साहित्य ही है।

साहित्य के क्षेत्र में भी कहानी, उपन्यास, निबन्ध, लेख आदि प्रचुर मात्रा में रचे जा रहे हैं। इन विषयों का माध्यम काव्य नहीं हो सकता। इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र, विज्ञान आदि का माध्यम गद्य ही होता है। कहानी, नाटक, उपन्यास, लेख आदि भी गद्य में रचे जा रहे हैं। गद्य के ही माध्यम से हम दैनिक जीवन में विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।

1.3 गद्य के सामान्य उद्देश्य

गद्य के सामान्य उद्देश्य निम्न हैं—

गद्य के सामान्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. छात्रों के वर्णों, शब्दों तथा वाक्यों में शुद्धता उत्पन्न करना।
2. छात्रों के सूक्ति भण्डार तथा शब्द भण्डार का विकास करना।
3. छात्रों में तर्क, विचार एवं मनन करने की शक्ति को विकसित करना।
4. छात्रों में गद्य के माध्यम से सांस्कृतिक विचारों का ज्ञान प्रदान करना।
5. छात्रों में स्पष्टता, क्रमबद्धता तथा संगमता का विकास करना।
6. ज्ञान-क्षेत्र एवं विवेक के विकास द्वारा चरित्र-चित्रण करना।
7. छात्रों के भाषा सम्बन्धी ज्ञान की वृद्धि करना।
8. छात्रों को सुन्दर गद्यात्मक उद्धरणों के संकलन की प्रेरणा देना।
9. छात्रों में गति-यति-लय, आरोह-अवरोह, तथा विराम चिन्हों के साथ-साथ वाचन की क्षमता का विकास करना।
10. छात्रों में अपने हृदय (Heart) के उद्‌गारों को सुसंगठित एवं क्रमबद्ध रूप से प्रकट करने की क्षमता उत्पन्न करना।

1.4 मुख्य उद्देश्य

मुख्य उद्देश्य छात्रों में प्राकृतिक प्रेम उत्पन्न करना तथा वर्णन और भाषा शैली का ज्ञान कराना होगा।

(i) भाषिक तत्वों का ज्ञान–इसके अन्तर्गत उच्चारण, शब्दार्थ, शब्द-प्रयोग, शब्द-रचना संधि, समास, उपसर्ग प्रत्यय आदि का उल्लेख।

(ii) विषय सामग्री का बोध–पाठान्तर्गत प्रमुख तथ्यों, भावों एवं विचारों का उल्लेख।

(iii) विचार विश्लेषण अथवा अर्थ ग्रहण–समीक्षात्मक, एवं सराहना की दृष्टि से आवश्यक उद्देश्यों का उल्लेख।

(iv) अभिव्यक्ति–प्रमुख भावों, विचारों को व्यक्त करने की योग्यता का विकास करना।

1.5 गद्य-पाठ और स्थूल एवं सूक्ष्म अध्ययन

गद्य-पाठों में से कुछ पाठ ऐसे होते हैं, जिनका सूक्ष्म अध्ययन करने की आवश्यकता पड़ती है। जिन पाठों का सूक्ष्म अध्ययन आवश्यक होता है, उनका मुख्य उद्देश्य भाषा शिक्षण है। इनके एक-एक शब्दों, वाक्यांशों, मुहावरों एवं लोकोक्तियों को समझना पड़ता है। इनके शब्दों को स्पष्ट करने के लिए अध्यापक विभिन्न युक्तियों को प्रयुक्त करता है। इन सूक्ष्म पाठों के उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. उनके शब्द-भण्डार में वृद्धि करना।

2. उन्हें व्याकरण सम्मत भाषा के प्रयोग की शिक्षा देना।

3. उन्हें गद्य की विभिन्न शैलियों से परिचित कराना।

सूक्ष्म पाठों के अतिरिक्त कुछ पाठ ऐसे भी होते हैं, जिनके गहन अध्ययन की आवश्यकता नहीं पड़ती। ये पाठ सरल होते हैं इनकी शब्दावली छात्र के लिए परिचित होती है। इसमें विषय का मुख्य बोध ही मुख्य शिक्षण बिन्दु है, न कि भाषा ज्ञान। संक्षेप में द्रुत-पाठ शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

(1) छात्रों को वाचन में गति लाने का अभ्यास कराना।

(2) उन्हें विषय-वस्तु का बोध करने की क्षमता प्रदान करना।

(3) उनमें सहायक पुस्तकों को पढ़ने की रुचि जागृत करना जिससे साहित्यिक अभिरुचि का विकास हो सके।

(4) उन्हें मौन वाचन का विशेष अभ्यास कराना।

(5) उन्हें स्वतन्त्र अध्ययन के लिए प्रोत्साहन देना।

गद्य शिक्षण में दोनों प्रकार के पाठों का महत्त्व है। सूक्ष्म पाठों द्वारा भाषा-ज्ञान की विशेष अभिवृद्धि होती है और उनमें भाषा-कार्य का विशेष महत्त्व है।

1.6 गद्य के विषय तथा गद्य संकलन की विशेषतायें

गद्य के विषय एवं गद्य संकलन की विधायें निम्नलिखित हैं—

गद्य के विषय	गद्य संकलन की विधायें
(1) सभ्यता एवं संस्कृति	(1) निबन्ध-वर्णनात्मक, विचारात्मक, भावात्मक, कथात्मक
(2) भौगोलिक एवं ऐतिहासिक	(2) गद्य-काव्य,
(3) वैज्ञानिक अन्वेषण	(3) आत्मकथा
(4) प्राकृतिक दृश्य, पर्व, तीर्थ आदि	(4) संस्मरण
(5) मनोभाव उत्साह, क्रोध, श्रद्धा भक्ति	(5) यात्रा-दर्शन
(6) साहित्य स्वरूप, महत्व	(6) हास्य व्यंग्य
(7) आत्मकथा एवं जीवनी	(7) जीवनी
(8) शिक्षा उद्देश्य एवं स्वरूप	(8) ललित निबन्ध
(9) दर्शन-सत्य, अहिंसा, सर्वोदय जीवन और दर्शन	(9) समीक्षा

1.7 गद्य का महत्त्व

1. **निबन्ध का माध्यम**—गद्य के माध्यम से उच्च श्रेणी के निबन्धों का सृजन किया गया है। रामचन्द्र शुक्ल की 'चिन्तामणि' इसका अनूठा उदाहरण है। इसमें क्रोध, श्रद्धा, भक्ति जैसे मानवीय आवेगों का सजीव रेखांकन किया गया। रामचन्द्र शुक्ल, श्यामसुन्दर शुक्ल, प्रेमचन्द जैसे साहित्यकार गद्य विधा के ऋणी हैं.

2. **कहानी का माध्यम**—गद्य के माध्यम से अनूठी कहानियों का सृजन किया गया है। प्रेमचन्द की पूस की रात, कफन, ईदगाह, मंत्र जैसी मर्मस्पर्शी कहानियों का सृजन गद्य में ही हुआ है।

3. **उपन्यास का माध्यम**—गद्य उपन्यास का सर्वाधिक सशक्त माध्यम है। गद्य का जीवंत रूप देने में उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका है। उनके द्वारा प्रणीत गोदान हिन्दी साहित्य का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है। यशपाल द्वारा रचित 'झूठ सच' वृन्दावनलाल वर्मा द्वारा रचित मृगनयनी, झाँसी की रानी, धर्मवीर भारती द्वारा प्रणीत गुनाहों का देवता, राघेय राघव द्वारा रचित 'कब तक पुकारून' तथा अज्ञेय द्वारा रचित 'शेखर एक जीवनी' हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि हैं।

4. **नाटक का माध्यम**—गद्य के माध्यम से साहित्य में अनेक मर्मस्पर्शी नाटकों का सृजन किया गया है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अनेक स्मरणीय नाटकों का सृजन गद्य में किया है था अंधेर नगरी, भारत दुर्दशा इत्यादि। जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित अजातशत्रु भी एक अनूठा नाटक है।

इसके अतिरिक्त संस्मरण एवं पत्रकारिता और आम भाषा के रूप में गद्य लेखन की सर्वश्रेष्ठ विद्या बन चुका है।

निष्कर्ष—गद्य साहित्य, पत्रकारिता, दर्शन और आम भाषा लेखन का माध्यम बन चुका है। अनेक विधाओं द्वारा गद्य के माध्यम से साहित्य का सृजन किया जा रहा है। पत्रकारिता के माध्यम से गद्य ने सम्पूर्ण आकाश को आवृत सा कर लिया है। बीसवी शताब्दी गद्य प्रधान कही जाती है। पद्य का महत्व धीरे-धीरे कम होता गया। हिन्दी प्रकाशकों के आँकड़े बताते है कि उपन्यास, कहानी, लघुकथा, स्केच, संस्मरण, यात्रा विवरण, रिपोतार्ज ज्यादा बिकते हैं।

प्रश्न

1. गद्य से क्या अभिप्राय है। गद्य शिक्षण के सामान्य उद्देश्यों का निरूपण कीजिए।
2. गद्य की प्रमुख विधाओं पर प्रकाश डालिए।
3. गद्य के महत्त्व को रेखांकित कीजिए।

❑

अध्याय
11
राजभाषा

संरचना

- ❖ राजभाषा का इतिहास
- ❖ सांविधानिक स्थिति
- ❖ राजभाषा के प्रयोग की प्रगति
- ❖ राजभाषा हिन्दी का भविष्य

उद्देश्य

- ❖ राजभाषा से परिचित कराना
- ❖ राजभाषा के प्रयोग का इतिहास ज्ञान कराना
- ❖ राजभाषा की प्रगति से परिचय कराना

भूमिका

राजकाज चलाने के लिए किसी-न-किसी भाषा की आवश्यकता होती है। अपने समय में संस्कृत, पालि महाराष्ट्री, प्राकृत अथवा अपभ्रंश राजभाषा रही हैं। इस समय संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी है।

1.1 राजभाषा का इतिहास

राजभाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग बारहवीं सदी से मिलने लगता है। 12वीं सदी के उत्तरार्ध में दो पत्र मिल हैं। एक महाराज पृथ्वीराज को चित्तौड़ नरेश समर सिंह ने 1172 ई में लिखा था दूसरा 1178 में समर सिंह पृथ्वीराज को लिखा।

तेरहवीं सदी में अलाउद्दीन खिलजी ने राजभाषा को प्रश्रय दिया। उसके सैनिकों के साथ हिन्दी दक्षिण में भ गई। 1327 ई में मुहम्मद तुगलक अपनी राजधानी दिल्ली से देवगिरि ले गया किन्तु जब वह अपनी राजधान वापस दिल्ली ले आया तो कुछ लोग देवगिरि में ही बस गए, इससे हिन्दी राजभाषा के रूप में वहाँ पहुँच गई लोदी वंश के शासकों ने राजभाषा के रूप में फारसी-के साथ-साथ हिन्दी को उचित स्थान दिया।

सभी मुसलमान शासक अपने सिक्कों पर कम-से-कम एक ओर देवनागरी में लिखवाते रहे।

मुगल बादशाह अकबर हिन्दी में कविताएँ करता था। तुलसीदास का प्रसिद्ध पंचनामा 17वीं सदी क राजभाषा हिन्दी का अच्छा उदाहरण है। मध्यकालीन हिन्दू रियासतें राजभाषा हिन्दी का प्रयोग करती थी।

मराठा राजाओं ने भी हिन्दी को प्रश्रय दिया। शिवाजी के दरबार में भूषण राजकवि थे। नेपाल से अंग्रे सरकार अपना पत्र व्यवहार हिन्दी में करती थी।

19वीं सदी में राजभाषा के रूप में हिन्दी से अंग्रेजी तथा अंगरेजी से हिन्दी में अनुवाद की व्यवस्था थी।

राष्ट्रीय चेतना के विकास के साथ स्वभाषा को राजपद दिलाने की माँग उठी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, महर्षि दयानन्द सरस्वती, केशवचन्द सेन, महामना मदन मोहन मालवीय, महात्मा गाँधी और पुरुषोत्तम दास टंडन ने अनुभव किया है कि हिन्दी राजभाषा होनी चाहिए। 14 सितम्बर 1949 ई को भारत के संविधान में हिन्दी को मान्यता प्रदान की गई।

1.2 सांविधानिक स्थिति

संविन की धारा 120 के अनुसार संसद का कार्य हिन्दी में या अंग्रेजी में किया जाता है। परन्तु यथास्थिति लोकसभा का अध्यक्ष या राज्यभाषा का सभापति किसी सदस्य को उसकी मातृभाषा में सदन को सम्बोधित करने की अनुमति दे सकता है। संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करें तो 15 वर्ष की अवधि के पश्चात् या अंग्रेजी में शब्दों का लोप किया जा सकेगा। धारा 210 के अन्तर्गत राज्यों के विधानमण्डलों का कार्य अपने-अपने राज्य की राजभाषा या राजभाषाओं में या हिन्दी में या अंग्रेजी में किया जा सकता है।

राज्य का विधानमंडल विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करें तो 15 वर्ष की अवधि के पश्चात् या अंग्रेजी में शब्दों का लोप किया जा सकेगा।

धारा 343—संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी और अंकों का रूप भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा। शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग 15 वर्ष की अवधि तक किया जाता रहेगा। परन्तु राष्ट्रपति इस अवधि के दौरान किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी के साथ हिन्दी भाषा का प्रयोग अधिकृत कर सकेगा। संसद उक्त 15 वर्ष की अवधि के पश्चात् विधि द्वारा अंग्रेजी भाषा का या देवनागरी अंकों का प्रयोग किन्हीं प्रयोजनों के लिए उपबन्ध कर सकेगी।

धारा 344—इस संविधान के प्रारम्भ से 5 वर्ष की समाप्ति पर राष्ट्रपति एक आयोग गठित करेगा जो निश्चित की जाने वाली एक प्रक्रिया के अनुसार राष्ट्रपति को सिफारिश करेगा कि किन शासकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी का प्रयोग अधिकाधिक किया जा सकता है। अंग्रेजी भाषा के प्रयोग पर क्या निर्बन्ध हो सकते हैं, न्यायालयों में प्रयुक्त होने वाली किस भाषा का क्या स्वरूप चलता रहे, किन प्रयोजनों के लिए अंकों का रूप क्या हो और संघ की राजभाषा अथवा संघ और किसी राज्य के बीच की भाषा अथवा एक राज्य और दूसरे राज्यों के बीच पत्र आदि की भाषा के बारे में क्या सुझाव हों।

धारा 346—संघ द्वारा प्राधिकृत भाषा एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच में तथा किसी राज्य और संघ की सरकार के बीच पत्र की राजभाषा होगी। यदि कोई राज्य परस्पर हिन्दी भाषा को स्वीकार करेंगे तो उस भाषा का प्रयोग किया जा सकेगा।

धारा 351 के अन्तर्गत यह निर्देश दिया गया है कि संघ का यह कर्त्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाये और उसका विकास करें ताकि वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके।

1.3 राजभाषा के प्रयोग की प्रगति

26 जनवरी 1950 को संविधान लागू हो गया और उसमें यह व्यवस्था दी गई कि हिन्दी को 1965 तक राजभाषा के पद पर आसीन कर दिया जायेगा। 1955 में यह आदेश जारी किया गया कि जनता के साथ पत्र-व्यवहार में प्रशासकीय रिपोर्टों, प्रस्तावों, संसदीय विधियों, सरकारी संधिपत्रों, करारनामों, अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहारों और अन्तर्राज्यों के कार्यों में हिन्दी के प्रयोगों को अंग्रेजी के साथ बढ़ाया जाए।

राजभाषा आयोग 1955

इस आयोग के मुख्य सुझाव निम्न हैं—

1. हिन्दी सर्वाधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा है, यही सारे भारत का एक माध्यम है।
2. चौदह वर्ष की उम्र तक भारत के प्रत्येक विद्यार्थी को हिन्दी का ज्ञान करा देना चाहिए।
3. भारत सरकार के प्रकाशन अधिक-से-अधिक हिन्दी में प्रकाशित करें।
4. प्रतियोगिता परीक्षाओं में हिन्दी का एक अनिवार्य प्रश्न-पत्र रखा जाए।
5. प्रशासनिक कर्मचारियों को निश्चित समय के अन्दर हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान हो जाना चाहिए। उत्साही कर्मचारियों को पुरस्कृत किया जाए।

संसद की राजभाषा समिति के सुझाव 1959

आयोग की मुख्य सिफारिश निम्न थीं—

1. जब तक कर्मचारी हिन्दी का ज्ञान न प्राप्त कर ले वे अंग्रेजी में कार्य करते रहे।
2. 1965 के बाद हिन्दी प्रधान भाषा हो और अंग्रेजी को सहभाषा का स्थान दिया जाए।

राष्ट्रपति का आदेश 1960

आदेश की मुख्य बातें निम्न थीं—

1. जिन कर्मचारियों की उम्र 45 वर्ष से कम है उनके लिए हिन्दी का प्रशिक्षण अनिवार्य बनाया जाए।
2. हिन्दी में वैज्ञानिक तकनीकी शब्दावली के निर्णय के लिए स्थायी आयोग स्थापित किया जाए।
3. टंकणों और आशुलिपिकों को हिन्दी में कार्य करने का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की जाए।
4. शिक्षा मंत्रालय हिन्दी प्रचार की व्यवस्था करे और इस कार्य में गैर सरकारी संस्थाओं की भी सहायत करे।
5. अखिल भारतीय सेवाओं में भरती के लिए परीक्षा का माध्यम अंग्रेजी बनी रहे और कुछ समय पश्चात हिन्दी और अन्य प्रादेशिक भाषाओं में करने की व्यवस्था की जाए।
6. राजकाज में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के लिए गृहमंत्रालय योजना तैयार करे।

राजभाषा नियम 1976

राजभाषा हिन्दी सम्बन्धी राष्ट्रपति के आदेशों, संसद की सिफारिशों और राजभाषा अधिनियम के उपबन्धों को कार्यान्वित करने का उत्तरदायित्व भारत सरकार से गृह मंत्रालय को सौंपा गया जिसके अधीन एक राजभाषा अनुभाग की स्थापना हुई। बाद में यह अनुभाग स्वतंत्र राजभाषा विभाग हो गया।

1976 के पश्चात् राजभाषा विभाग का कार्य

विभाग की ओर से समय-समय पर ज्ञापन निकाले जाते हैं, जिनमें हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने का कार्य-नियम किया जाता है, जो केन्द्रीय सरकार के सभी मंत्रालयों, निदेशालयों, विभागों, राष्ट्रीयकृत बैंकों, कम्पनियों और उद्यमों पर लागू होते हैं।

विभाग प्रतिवर्ष हिन्दी के राजभाषा के रूप में उत्तरोत्तर विकास के लिए कार्यक्रम निर्धारित करता है, कित प्रतिशत कर्मचारी हिन्दी का प्रयोग करने लगे, कितने टाइपिस्टों, आशुलिपिकों को प्रशिक्षित किया जा

जगह-जगह प्रदर्शनियाँ आयोजित की जाएँ, हिन्दी में कार्य करने वाले कर्मचारियों को पुरस्कृत किया जाए, टाइप और आशुलिपि की प्रतियोगिताएँ आयोजित की जाए। राजभाषा हिन्दी के लिए काम करने वाली स्वैच्छिक संस्थाओं को प्रोत्साहित किया जाए।

राजभाषा विभाग हिन्दी शिक्षण योजना के अन्तर्गत कक्षाएँ चलाता है। इसके लिए तीन पाठ्यक्रम प्रबोध, प्रवीण और प्रज्ञ बनाए गए हैं। सांविधिक साहित्य अर्थात् केन्द्रीय अधिनियमों, नियमों, विनियमों आदि का हिन्दी अनुवाद विधि मंत्रालय का विद्यार्थी विभाग कर रहा है। प्रशासनिक मैन्युलों, सूचनाओं, नियमों, फार्मों आदि का अनुवाद पहले हिन्दी निदेशालय करता था अब यह कार्य केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो करता है।

शिक्षा मंत्रालय के अन्तर्गत हिन्दी निदेशालय वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावलियों का निर्माण और प्रकाशन, विश्वविद्यालयों के लिए अनेक विषयों में पाठ्य-पुस्तकों का प्रकाशन, त्रिभाषी कोशों का निर्माण, स्तरीय पुस्तकों का हिन्दी में अनुवाद, अहिन्दी प्रदेशों के लिए पाठ्य सामग्री का निर्माण इत्यादि किया जाता है।

1.4 राजभाषा हिन्दी का भविष्य

राजभाषा हिन्दी का भविष्य उज्ज्वल है। सरकारी दफ्तरों में हिन्दी में कार्य की प्रवृत्ति बढ़ रही है। बैंकों में हिन्दी का प्रचलन बढ़ रहा है। दक्षिण भारत में हिन्दी समझी और बोली जाती है। लेकिन विशेषकर तमिलनाडु में हिन्दी विरोध अब भी है। हिन्दी भाषियों को भी दक्षिण भारतीय भाषाओं तमिल, तेलुगू और मलयालम सीखनी चाहिए जिससे दक्षिण भारतीयों में उनमें हिन्दी के प्रति सद्भावना का संचार होगा।

निष्कर्ष—हिन्दी को वास्तविकता में राजभाषा बनाने के लिए अथक प्रयास की आवश्यकता है। शिक्षा, विज्ञान और प्रौद्योगिकी की भाशा बनाने हेतु तकनीकों शब्दों का अनुवाद परमावश्यक है। वही हिन्दी के प्रति अहिन्दी भाषी राज्यों के पूर्वाग्रह को भी समाप्त करने का प्रयास किया जाना चाहिए। सरकार को अहिन्दी भाषी सरकारी कर्मचारियों को हिन्दी में उत्कृष्टता हासिल करने पर वेतनवृद्धि की व्यवस्था करनी चाहिए। अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में गोष्ठियों, प्रतियोगीताओं एवं सम्मेलनों द्वारा हिन्दी का प्रचार-प्रसार करना चाहिए।

प्रश्न

1. राजभाषा हिन्दी के इतिहास से अवगत कराइए।
2. राजभाषा की सांविधानिक स्थिति पर प्रकाश डालिए।
3. राजभाषा के प्रयोग की प्रगति को रेखांकित कीजिए।

❑

अध्याय

12

राष्ट्रभाषा

संरचना

- ❖ राष्ट्रभाषा की आवश्यकता
- ❖ हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास
- ❖ स्वाधीनता संघर्ष और राष्ट्रभाषा
- ❖ स्वाधीनता संघर्ष में लेखकों और पत्रकारों की भूमिका
- ❖ राष्ट्रभाषा हेतु अर्हताएँ

उद्देश्य

- ❖ राष्ट्रभाषा से परिचय कराना
- ❖ राष्ट्रभाषा की आवश्यकता से परिचित कराना
- ❖ स्वतंत्रता संघर्ष में राष्ट्रभाषा की भूमिका

भूमिका

राष्ट्रभाषा वह है जिसका व्यवहार राष्ट्र के सामान्य जन करते हैं। राष्ट्रभाषा का क्षेत्र विस्तृत और देशव्यापी होता है। राष्ट्रभाषा सारे देश की एक सम्पर्क भाषा है। राष्ट्रभाषा के साथ जनता का भावात्मक लगाव होता है। क्योंकि उसके साथ जनसाधारण की सांस्कृतिक परम्पराएँ जुड़ी रहती हैं।

1.1 राष्ट्रभाषा की आवश्यकता

राष्ट्रभाषा की प्रत्येक देश के लिए अहम आवश्यकता है। जिस देश के लोग एक भाषा के सूत्र में बँधे रहते हैं। उनमें भावों और विचारों की एकरूपता होती है भाषा की विभिन्नता के कारण राजनीतिक अथवा सांस्कृतिक एकता जाग्रत नहीं हो सकती। प्रत्येक समुन्नत देश की अपनी राष्ट्रभाषा है यथा इंग्लैण्ड, अमेरिका, फ्रांस, रूस, चीन व जापान इत्यादि।

1.2 हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास

गार्सा द तासी ने 1552 में हिन्दुस्तानी को अखिल देशीय भाषा कहा था। सर्वप्रथम हिन्दी को राष्ट्रभाषा 1860 के लगभग कहा गया। 1869 में एक मराठी विद्वान श्री पेठे ने मराठी में राष्ट्रभाषा नामक पुस्तक लिखी और लिखा भारत के लिए एक राष्ट्रभाषा की आवश्यकता है और यह भाषा हिन्दी हो सकती है। 1878 में बंकिम बाबू ने 'बंगदर्शन' नामक पत्र में एक लम्बे लेख में हिन्दी की हिमायत की।

आर्य समाज के संस्थापक दयानन्द सरस्वती ने अपना सारा धार्मिक साहित्य हिन्दी में लिखा। वे इस आर्यभाषा को सर्वात्मना देशोन्नति का मुख्य आधार मानते थे। उन्होंने हिन्दी के प्रयोग को राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान किया। थियोसोफिकल सोसायटी की वास्तविक संस्थापक एनी बेसेंट ने कहा था 'भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न भागों में जो अनेक देशी भाषाएँ बोली जाती हैं, उनमें एक भाषा ऐसी है जिसमें शेष भाषाओं की अपेक्षा एक भारी विशेषता है, कि उसका प्रचार सबसे अधिक है। वह भाषा हिन्दी है। हिन्दी जानने वाला आदमी सम्पूर्ण भारत में मिल सकता है और वह भारतवर्ष भर में यात्रा कर सकता है।

1.3 स्वाधीनता संघर्ष और राष्ट्रभाषा

कांग्रेस की स्थापना 1885 ई में हुई। 1909 में गाँधी जी ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी स्वराज और होमरूल' लिखी जिसमें उन्होंने हिन्दी को अखिल भारतीय भाषा के रूप में अपनाने तथा अंग्रेजी को अपने व्यवहार से बाहर निकालने की बात स्पष्ट कही। कांग्रेस के 1925 के कानपुर अधिवेशन में यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ कि कांग्रेस अपने सभी कार्यों में प्रादेशिक समितियों के कार्य में प्रादेशिक भाषाओं और हिन्दी का प्रयोग करें। कांग्रेस अधिवेशनों के साथ राष्ट्रभाषा सम्मेलन होने लगे। हिन्दी नाना भाषियों के बीच संयोगसूत्र बन गई। हिन्दी के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना फैली। एन सी केलकर ने लिखा ''मेरी समझ में हिन्दी भारतवर्ष की सामान्य भाषा होनी चाहिए। तिलक ने भारतवासियों से आग्रह किया कि वे हिन्दी सीखे।

1864 के आसपास बंगाल के नेता डॉ राजेन्द्र लाल मित्र ने देशप्रेम के लिए हिन्दी का प्रबल समर्थन किया। बंकिमचन्द चटर्जी ने भविष्यवाणी करी कि हिन्दी एक दिन भारत की राष्ट्रभाषा होकर रहेगी। महर्षि अरविन्द ने कहा था 'अपनी मातृभाषा की रक्षा करते हुए हिन्दी को सामान्य भाषा के रूप में जानकार हम प्रान्तीय भेदभाव नष्ट कर सकते हैं। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस 1918 ई० में कलकत्ता कांग्रेस के स्वागताध्यक्ष थे। उन्होंने अपना भाषण हिन्दी में पढ़ा। 1929 में उन्होंने कहा ''प्रान्तीय ईर्ष्या-द्वेष को दूर करने में जितनी सहायता इस हिन्दी प्रचार से मिलेगी उतनी दूसरी किसी चीज से नहीं मिल सकती। आचार्य क्षिति मोहन सेन ने कहा हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने हेतु जो अनुष्ठान हुए हैं उनको मैं संस्कृति का राजसूय यज्ञ समझता हूँ।

1918 में दयानन्द सरस्वती ने कहा था 'मेरा यह मत है कि हिन्दी ही हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा हो सकती है और होनी चाहिए। 1936 में गाँधीजी ने कहा था ''अगर हिन्दुस्तान को सचमुच आगे बढ़ना है तो चाहे कोई माने या माने राष्ट्रभाषा तो हिन्दी बन सकती है।'' गाँधीजी की प्रेरणा से वर्धा और मद्रास में **राष्ट्रभाषा, प्रचार सभाएँ** स्थापित हुई जिनके हजारों प्रचारकों ने हिन्दी प्रदेश में हजारों-लाखों को हिन्दी सिखाई। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास की स्थापना गाँधी जी ने की। अन्य प्रांतों में भी गाँधी जी ने प्रचार सभाओं की स्थापना की।

1945 में बल्लभभाई पटेल ने कहा था 'हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाना नहीं है, वह तो राष्ट्रभाषा है।'

1929 ई में सी राजगोपालाचारी ने दक्षिणवालों को हिन्दी सीखने की सीख दी। उनका मत था 'हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा तो है ही, यही जनतंत्रात्मक भारत में राजभाषा होगी। सर विजयराघवाचार्य ने कहा 'चाहे व्यवहारिक दृष्टि, सैद्धान्तिक दृष्टि या राष्ट्रीय दृष्टि से देखा जाये, हिन्दी का कोई दूसरा प्रतिद्वन्द्वी सम्भव नहीं है। सर सी पी रामास्वामी अय्यर कहा करते थे, ''देश के विभिन्न भागों के निवासियों के व्यवहार के लिए सर्वसुगम और व्यापक तथा एकता स्थापित करने के साधन के रूप में हिन्दी आवश्यक है।

डॉ राजेन्द्र प्रसाद का मत था मैं हिन्दी के प्रचार, राष्ट्रभाषा के प्रचार को राष्ट्रीयता का मुख्य अंग मानता हूँ। राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन को हिन्दी का प्रहरी कहा गया है। उनके प्रयत्नों से हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थापना हुई जिसकी परीक्षाओं में लाखों विद्यार्थी बैठ चुके हैं।

1.4 स्वाधीनता आन्दोलन में लेखकों और पत्रकारों की भूमिका

भारतेन्दु-हरिश्चन्द्र ने भारत-दुर्दशा और भारत जननी में कटु शब्दों में अंग्रेजों की नीति की आचोलना की। प्रताप नारायम मिश्र ने अपने पत्र 'ब्राह्मण' में बालकृष्ण भट्ट ने 'हिन्दी प्रदीप' और बाल मुकन्द गुप्ता ने शिवशम्भू के चिट्ठे शीर्षक लेखों में भारत देश के प्रति होने वाले अत्याचारों और आर्थिक शोषण से तिलमिलाती जनता के आक्रोश को हिन्दी में मुखरित किया।

रामानन्द चट्टोपाध्याय का मासिक पत्र विशाल भारत कई वर्ष तक राष्ट्रीय चेतना को जगाता हुआ हिन्दी की सेवा करता रहा। इलाहाबाद से प्रकाशित सरस्वती ने 60 वर्ष तक हिन्दी भाषा और हिन्दी साहित्य के माध्यम से राष्ट्रीय आन्दोलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। अन्य मासिक पत्रिकाओं में माधुरी, सुधा, वीणा, प्रभा ने स्वाधीनता संघर्ष में अपना योगदान दिया। मालवीय जी ने अभ्युदय, तिलक ने केसरी, गाँधी जी ने नवजीवन आचार्य नरेन्द्र देव ने संघर्ष, गणेश शंकर विद्यार्थी और बालकृष्ण नवीन ने प्रताप के माध्यम से राष्ट्रीय संघर्ष में योगदान दिया।

मैथिलीशरण गुप्त (भारत भारती द्वारा), माखनलाल चतुर्वेदी, महावीर प्रसाद द्विवेदी, सुभद्राकुमारी चौहान, प्रेमचन्द इत्यादि ने भी स्मरणीय योगदान दिया।

1.5 राष्ट्रभाषा हेतु अर्हताएँ

राष्ट्र में एक राष्ट्रभाषा हमारे गौरव और हमारी राष्ट्रीय प्रतिष्ठा की सूचक है। सार्वदेशिक पूरे देश की सम्पर्क भाषा बनने या मान्य होने के लिए विद्वानों ने निम्न अर्हताएँ गिनाई हैं—

1. वह राष्ट्र में बहुसंख्यक जनता द्वारा बोली जाती हो।
2. इसका अपने क्षेत्र से बाहर भी व्यापक विस्तार हो।
3. उसकी व्याकरणिक संरचना सरल, सुबोध एवं वैज्ञानिक हो।
4. उसकी शब्द-सामर्थ्य तथा अभिव्यंजना क्षमता उत्तम हो।
5. उसकी लिपि पूर्ण और वैज्ञानिक हो।
6. उसमें जीवतंता और सजीवता हो ताकि वह नए शब्दों और प्रयोगों को आत्मसात करती हुई विकासोन्मुख रहे।
7. वह राष्ट्र की सांस्कृतिक और भाषिक विरासत की सशक्त उत्तराधिकारी हो।

निष्कर्ष–भारत की भाषाओं में हिन्दी ऐसी भाषा है जिसमें उपर्युक्त गुण पाये जाते हैं। विदेशी पर्यटक हिन्दी से अपना लगाव आसानी से बना लेते हैं। हिन्दी का शब्द भंडार अत्यन्त समृद्ध है और इसमें देशी विदेशी सब तरह के शब्दों को पचाने की अद्‌भुत क्षमता है जिसमें यह भारत की प्रगतिशील भाषा कही जाती है। हिन्दी विरोधी यह प्रश्न उठाते रहे हैं कि हिन्दी ही एकमात्र राष्ट्र भाषा क्यों हो—गुजराती, मराठी, बंगाली, तमिल, तेलगु क्यों नहीं। हिन्दी ही राष्ट्रभाषा हो इसके लिए यह उदाहरण उपयुक्त है कि हमारे देश में कितने ही सुन्दर और उपयोगी पक्षी हैं—तोता, मैना, कबूतर, बाज (श्येन), शिकरा परन्तु 'मोर' राष्ट्रीय पक्षी है। इससे अन्य पक्षी न अभारतीय हैं न अराष्ट्रीय राष्ट्रीय पशु चीता है इससे हाथी, सिंह, हिरन, गाय आदि के प्रति हमारे आदर और गर्व पर प्रश्नचिह्न क्यों लगे?

प्रश्न

1. राष्ट्रभाषा से क्या आशय है? राष्ट्रभाषा की आवश्यकता समझाइए।
2. हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास रेखांकित कीजिए।
3. स्वाधीनता संघर्ष में राष्ट्रभाषा की भूमिका की विवेचना कीजिए।
4. राष्ट्रभाषा हेतु विद्वानों ने कौन-सी अर्हताएँ निर्धारित की हैं?

अध्याय

13

हिन्दी भाषा का शब्द भण्डार

संरचना

- ❖ उत्पति का आधार
- ❖ गठन का आधार
- ❖ प्रयोग-क्षेत्र का आधार
- ❖ रूप या प्रयोग का आधार

उद्देश्य

- ❖ हिन्दी भाषा के शब्द भंडार से परिचित कराना

1.1 (क) उत्पत्ति का आधार

व्युत्पत्ति, स्रोत या तिहास की दृष्टि से हिन्दी शब्दभंडार के चार भेद हैं—तत्सव, तद्भव, देशज (देशी) और विदेशी।

1. **तत्सम** अर्थात् उस (संस्कृत के समान—समान ही नहीं, अपितु शुद्ध संस्कृत के शब्द जो हिन्दी में ज्यों के त्यों प्रचलित हैं। साधारण जन की भाषा में माता, पिता, नेता, राजा, मंत्री, देवता, जप, जल, फल, अन्न, अंग, अंग, इच्छा, आसन, उपकार, दया, उपदेश, संत, महात्मा, साधु, दंड आदि सैकड़ों संस्कृत के शब्द मिल जाते हैं। उदाहरण—अंधकार, अक्षर, अग्नि, अतिथि, अधिक, अधिकार, अधीर, अध्यापक, अन्याय, अर्त, अशान्ति, असंतोष, आकार, आवश्यकता, ईश्वर, उन्नति, उत्तम, उत्तर, उदार, उचित, उत्सव, औषधालय, कार्य, गुप्त, घातक, छाया, ज्वर, जन्म, दक्षिण, धातु, नियम, प्राप्त, प्राण, प्रातः, बुद्धि, महिला, रक्षा, वस्तु, विद्या, विज्ञान, शिक्षा, स्वास्थ्य। बोलचाल की अपेक्षा लिखित भाषा में संस्कृत या तत्सम शब्दावली का प्रयोग अधिक होता है। लिखित भाषा में भी कहानी की अपेक्षा कविता में साधारणतः तत्सम शब्द अधिक होते हैं और विचारप्रधान निबन्धों में उससे भी अधिक ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में तत्सम शब्दावली के बिना काम नहीं चलता।

2. **तद्भव** का अर्थ है 'उस (संस्कृत) से उत्पन्न' या विकसित; जसे—अंधकार से अंधेरा, अग्नि से आग, अट्टालिका से अटारी, अष्ट से आठ, अश्रु से आँसू, उच्च से ऊँचा, उष्ट्र से ऊंट, ओष्ठ से ओंठ, कपाट से किवाड़, कर्म से काम, कुपुत्र से कपूत, क्षीर से खीर, क्षेत्र से खेत, गृह से घर, ग्रन्थि से गाँठ, घृणा से घिन, घृत से घी, चन्द्र से चाँद, चर्मकार से चमार, छत्र से छाता, छिद्र से छेद, जिह्वा से जीभ, दंत से दाँत, नग्न से नंगा, निद्रा से नींद, नृत्य से नाच, पत्र से पत्ता, पौष से पूस, बधिर से बहरा, रात्रि से रात, लौह से लोहा, लक्ष से लाख, शय्या से सेज, शत से सौ, श्वास से साँस, सप्त से सात।

3. **विदेशी** शब्द तुर्की, अरबी, फ़ारसी आदि एशिया की भाषाओं से, और अंग्रेज़ी फ्रेंच पुर्तगाली आदि यूरोपीय भाषाओं से लिये हैं। उदाहरण—

तुर्की से—उर्दू, कालीन, काबू, कैंची, कुली, कुर्की, चाकू, चिक, चम्मच, चकमक, चेचक, तलाश, तोप, तोशक, दरोगा, बारूद, बहादुर, बेगम, लफंगा, लाश, सराय, सुराग।

अरबी से—अजब, अजीब, अदालत, अक्ल, अल्लाह, असर, आखिर, आदमी, इनाम, इजलास, इज्जत, इलाज, ईमान, उम्र, एहसान, औरत, औसत, कब्र, कमाल, कर्ज, किस्मत, कीमत, किताब, कुरसी, खत, ख़त्म, खिदमत, ख्याल, जिस्म, जुलूस, जलसा, जवाब, जहाज, जलेबी, ज़िक्र, तमाम, तकदीर, तारीख, तकिया, तरक्की, दवा, दावा, दिमाग़, दुकान, दुनिया, नतीजा, नगर, नकल, फकीर, फिक्र, फैसला, बहस, बाकी,

मुहावरा, मदद, मजबूर, मुकदमा, मौसम, मौलवी, मुसाफ़िर, यतीम, राय, लिफ़ाफा, वारिस, शराब, हक, हज़म, हाजिर, हिम्मत, हुक्म, हैज़ा, हौंसला, हकीम, हलवाई।

फ़ारसी से—आबरू, आतिशबाजी, आफ़त, आराम, आमदनी, आवारा, आवाज़, उम्मीद, उस्ता, कमीरा, कारीगर, किशमिश, कुरता, कुश्ती, कूचा, ख़ाक, ख़ुद, ख़ुदा, ख़ामोश, ख़ुराक, गरम, गज, गवाह, गिरफ्तार, गिर्द, गुलाब, चादर, चालाक, चश्मा, चेहरा, जहर, जलसा, जुलूस, ज़ोर, जिन्दगी, जागीर, जादू, जुरमाना, जोश, तबाह, तमाशा, तन्खाह, ताज़ा, तेज़, दंगल, दफ्तर, दरबार, दवा, दिल, दीवार, नापसंद, नापाक, पाजामा, परदा, पैदा, पुल, पेश, बारिश, बीमार, बुख़ार, बर्फी, मज़ा, मलाई, मकान, मज़दूर, मुश्किल, मोरचा, याद, यार, रंग, राह, लगाम, लेकिन, वापिस, शादी, सितार, सरदार, समोसा, साल, सरकार, हफ्ता, हज़ार।

चीनी—चाय, लीची।

जापानी—झम्पान, रिक्शा।

पुर्तगाली—अनन्नास, आलपीन, गमला, गिरजा, चाबी, नीलाम, पपीता, पाव (रोटी), पादरी, बंबा, बाल्टी, फीता, आलमारी।

फ्रेंच—अंग्रेज, कारसूत, कूपन, फ्रांसीसी।

डच—तुरुप, बम (टाँगे का)

रूसी—रूबल, वोदका, स्पुतनिक

अंग्रेज़ी—विदेशी शब्दों में पढ़े-लिखे लोगों की शब्दावली में अंग्रेज़ी के ढेरों शब्द पाय जाते हैं। इनमें कुछ तो साधारण जनता में भी प्रचलित हैं। उदाहरण—

अपील, कोर्ट, मजिस्ट्रेट, जज, पुलिस, टैक्स, कलक्टर, डिप्टी, आफ़िसर, वोट, पेन्शन, कापी, पेंसिल, पेन, पिन, पेपर, लाइब्रेरी, स्कूल, कालेज; अस्पताल, डाक्टर, कंपाउंडर, नर्स, आपरेशन, वार्ड; प्लेग, मलेरिया, कालरा, हार्निया, डिपथीरिया, कैंसर; कोट, कालर, पैंट, हैट, बुशशर्ट, स्वेटर, हैट, बूट, जम्पर, ब्लाउस; कप, प्लेट जग; लैम्प, सूटकेस, गैस माचिस; केक, टाफ़ी, बिस्कुट, टोस्ट, चाकलेट, जैम, जेली; ट्रेन, बस, कार, मोटर, लारी, स्कूटर, साइकिल, बैटरी, ब्रेक, इंजन; यूनियन, रेल, टकट, पार्सल, पोस्ट कार्ड, मनी आर्डर, स्टेशन, आफ़िस, क्लर्क, गार्ड, एजंट।

(4) **देशज (देशी)** का अर्थ है अपने 'देश में, उत्पन्न जो शब्द न विदेशी है, न तत्सम हैं और न तद्भव हैं। ऐसे शब्द दो प्रकार के हैं—(1) एक वे जो अनार्य भाषाओं (विशेषतः द्रविड़ भाषाओं) से अपनाये गये हैं और दूसरे वे जो लोगों ने ध्वनियों की नकल में गढ़ लिये हैं। उदाहरण—

(क) द्रविड़ भाषाओं से—उड़द, ओसारा, कच्चा, कज्जल, कटोरा, काका, केड, कुटी, कुप्पी, केतकी, घुण, चंदन, चिकना, चूड़ी, झंडा, टंटा, टोपी, ठोस, डंका, नीर, पापड़, पिंड, पेट, माला, मीन, मुकुट, लोटा, सूजी। इधर इडली, डोसा, सांभर आदि अनेक शब्द आ गये हैं।

(ख) अपनी गठन से—अनुकरणात्मक या ध्वन्यात्मक शब्द—ऊटपटाँग, कड़क, किलकारी, खटपट, खर्राटा, गड़गड़, चटक, चटपटा, चिड़चिड़ा, चुटकी, छिछला, झंकार, टंकार, भभक, भोंपू, कटकटाना, खटखटाना, खुरचना, घुड़की।

(5) कुछ संकर शब्द भी होते हैं, जिनमें दो-दो भाषाओं के तत्त्वों का मिश्रण होता है, जैसे—थानेदार (हिन्दी + फ़ारसी), वोटदाता (अंग्रेजी + तत्सम), फ़ेशनपरस्त (अंग्रेजी + फ़ारसी), बदहज़मी (फ़ारसी + अरबी), परदानशीन (अरबी + फ़ारसी), लाजशरम (हिन्दी + फ़ारसी), मोटरगाड़ी (अंग्रेजी + देशज)।

1.2 (ख) गठन का आधार

गठन या बनावट के आधार पर शब्दों के तीन भेद किये गये हैं—रूढ़ यौगिक और योगरूढ़।

(1) **रूढ़ शब्द**—जिनका गठन एक सार्थक इकाई से हुआ हो, जिसके अर्थवान खंड न हो सकें, जैसे—खंड, बल, चाल, रूप, सुन, भीड़, कुछ।

(2) **यौगिक शब्द**—जिनका गठन एक से अधिक सार्थक इकाइयों से हुआ हो; जैसे—पीलापन, दूधवाला, रामलाल, दीनबन्धु, उपमंत्री, मच्छरदानी। ऐसे शब्द उपसर्ग (अप, अधि, अधः, उप, अनु, आदि), प्रत्यय (त्व, मानु, चर, कार, पन, आलु, आदि) और समास द्वारा बनते हैं।

योगरूढ़ शब्द—जो यौगिक तो होते हैं, परन्तु जिनका अर्थ रूढ़ हो जाता है। यौगिक होते हुए भी ये शब्द एक इकाई हो जाते हैं; जैसे—दशरथ, हनुमान, पंकज, गिरधारी।

1.3 (ग) प्रयोग-क्षेत्र का आधार

प्रयोग-क्षेत्र के आधार पर शब्दों के दो भेद हैं—सामान्य शब्द और पारिभाषिक शब्द। सामान्य शब्द सामान्य भाषा में, जीवन के साधारण क्षेत्रों में प्रयुक्त होते हैं और पारिभाषिक शब्द विशिष्ट क्षेत्रों जैसे विज्ञान, दर्शन, अर्थशास्त्र, विधि, यान्त्रिकी आदि में। उदाहरण—(क) चलना, फिरना, भरा, खाली, पानी, दाल, रोटी, चाय, शरबत, लिखाई, पढ़ाई, दुकान, दफ्तर, साइकिल, टाँगा, धोती, पाजामा, कोट, किताब, पुस्तक, कलम, स्याही, सामान्य शब्द हैं।

(ख) पारिभाषिक शब्द शासन में—वरिष्ठता, शासन, प्रशासन, अनुशासन, आय-व्ययक, अधिनियम, नियम, विनियम, विधि, उपविधि, विधान, प्रावधान, सचिव, निदेशक, न्यायाधीश, न्यायमूर्ति, वादी, प्रतिवादी।

विज्ञान में—संकरण, परासंक्रमण, अणुसंकरण, परागण, पारसंयुग्मन, सम्बन्धन, सहसम्बन्धन, पराबैंगनी, एक्स-रे, अणुसूत्र, केन्द्रक, तुल्यभार।

आयुर्वेद में—जाति जैविकी, प्रजातीय एकक, अल्परक्तता रेशेदार, विभंग, पैत्तिक ज्वर, सतत ज्वर इत्यादि।

अर्थशास्त्र में—अनिवार्य अर्जन, धनादेश, अर्थव्यवस्था, अधिशेष, प्रतिभू।

इसी प्रकार प्रत्येक ज्ञान-विज्ञान की शाखा में विशिष्ट शब्दों का प्रयोग होता है।

1.4 (घ) रूप या प्रयोग का आधार

रूप या प्रयोग के आधार पर कुछ शब्द ऐसे होते हैं जिनका वाक्य में प्रयोग होने पर रूप बदलता है और कुछ ऐसे हैं जिनका रूप नहीं बदलता। 'मुझे अपने कमरे में अभी तक क्यों सोने दिया'—इस वाक्य में, अपना, कमरा, सोना और देना शब्द वाक्य में पड़कर बदल गये हैं। यही शब्द किसी और वाक्य में मुझसे, अपनी, कमरों, सोया, दी या देता के रूप में प्रयुक्त हो सकते हैं। ऐसे शब्दों को **विकारी शब्द** कहते हैं। अभी, तक, क्यों, आज आदि बहुत से शब्द ऐसे हैं जिनका रूपान्तर नहीं होता। इन्हें **अविकारी** कहते हैं। रूप या प्रयोग की दृष्टि से शब्द आठ प्रकार के माने जाते हैं—संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया—ये चार प्रकार विकारी हैं; क्रियाविशेषण, समुच्चयबोधक, सम्बन्धबोधक और विस्मयबोधक शब्द अविकारी हैं।

उदाहरण—

संज्ञाएँ—ब्राह्मण, जयचंद, रामनगर, हाथ, कमरा, लड़का, लड़की, किताब, पुलिस, सफाई, ममता, बालपन, ढेर, कर्म, सरदी।

सर्वनाम—मैं, तू, वह, यह, इसे, उसे, जो, जिसे, कौन, क्या, कोई, सब।

विशेषण—अच्छा, बुरा, नीला, पीला, मीठा, बुद्धू।

क्रियाएँ—सोना, जागना, उठना, बैठना, लेना, देना, रहना, रखना, दिलाना, पिलाना, लिखवाना, सुलाना।

क्रियाविशेषण—आज, कल, अब, कब, परसों, यहाँ, वहाँ, इधर, उधर, कैसे।

सम्बन्धबोधक—में, से, पर, के ऊपर, के नीचे, के आगे, से आगे, की ओर।

समुच्चबोधक—और, परन्तु, या, इसलिए, तो, यदि, क्योंकि।

विस्मयादिबोधक—आहा ! हा ! हाय ! ओह ! वाह वाह ! राम राम ! या अल्लाह !

निष्कर्ष—हिन्दी भाषा विश्व की अनेक भाषाओं से शब्दों को लेती हुई गतिशील भाषा की छवि अंकित करती है। विदेशी भाषा के शब्दों को ज्यों का त्यों लेकर इसकी सामर्थ्य बढ़ी है। अपने विस्तृत शब्द भंडार, व्याकरणिक सुगठता और वैज्ञानिकता के कारण हिन्दी उन्नति के पथ पर अग्रसर है।

प्रश्न

1. तत्सम शब्दों से क्या आशय है?
2. विदेशी-भाषा से आये शब्दों को रेखांकित कीजिए।
3. तद्भव शब्दों पर प्रकाश डालिए।

❑

अध्याय

14

हिन्दी भाषा का मानकीकरण

संरचना

- ❖ मानकीकरण
- ❖ मानकीरण की आवश्यकता
- ❖ हिन्दी के मानक रूप का विकास
- ❖ द्विवेदी युग का विशेष योगदान
- ❖ स्वतंत्रता प्राप्ति से तुरन्त पूर्ण का युग
- ❖ स्वतंत्रतोपरांत
- ❖ वर्तनी का मानकीकरण
- ❖ शब्दावली का मानकीरण
- ❖ व्याकरण

उद्देश्य

- ❖ हिन्दी भाषा के मानकीकरण से परिचति कराना
- ❖ भाषा की सुबोधता और परिमार्जन का ज्ञान कराना

भूमिका

भाषा के मानकीकरण की आवश्यकता होती है। कुछ शब्द ऐसे होते हैं जो प्रचलन में तो होते हैं लेकिन मानक नहीं होते हैं।

मानकीकरण

शिक्षित समाज द्वारा और शिक्षित समाज के लिए भाषा का जो सामान्यीकृत आदर्श होता है उसे भाषा का मानक रूप कहते हैं, जिसका स्वरूप शिक्षा, संचार माध्यमों और सरकारी कामकाज से प्रतिष्ठित होता है। इसे व्यापक रूप में सामाजिक मान्यता प्राप्त होती है। इसका क्षेत्र बोली के क्षेत्र से बड़ा होता है। यह किसी एक बोली के आधार पर विकसित किया जाता है। यह विकास काल में अनेक बोलियों का महत्तम समापवर्तक हो जाता है और क्रमशः अपनी मूल बोली से भी अंशों में दूर हो जाता है। उदाहरणस्वरूप, खड़ी बोली हिन्दी का आधार मेरठ और उसके आसपास बोली जाने वाली कौरवी बोली है परन्तु भाषा का लिखित रूप हो जाने के कारण और इसका अपने क्षेत्र से बाहर फैलकर व्यापक हो जाने के कारण इसके उच्चारण, अक्षर योजन, व्याकरण और वाक्य गठन में कौरवी की अपेक्षा बहुत अन्तर आ गया है, जैसे—कौरवी में ट वर्गीय ध्वनियों की बहुलता है (राणी, जाणा, बड़ा) ळ ह्रस्व ए पाया जाता है (देखाना, बेट्टी), किन्हीं और स्वरों में भी दीर्घता कम होने के कारण परवर्ती व्यंजन द्वित्व होता है (राज्जा, नौक्कर, बाप्पू)। व्याकरण में भी वर्तमानकाल में जावै (जाता है),

भूतकाल में (देख्या, सुण्या) संज्ञा बहुवचन पुल्लिग में मर्द को, स्त्रीलिंग बहुवचन लड़कियों और लड़की, परसर्गों में कूँ नूँ, तें सें ती, सर्वनाम में मुज, तुज, जोण, कोण इत्यादि बहुत से ऐसे रूप हैं जो बहुत से आधार-भाषा में तो थे परन्तु मानक हिन्दी में छोड़ दिये गये हैं।

आधार एक होते हुए भी, मानक भाषा, को उसी बोली के अनेक रूपों में से एक-एक का चयन करना पड़ता है। एकरूपता मानक भाषा परमावश्यक लक्षण है। उदाहरणस्वरूप कौरवी में कर्म और सम्प्रदान कारक के लिए पाँच परसर्ग हैं—को, कू, नूँ, ने के; परन्तु खड़ी बोली में एक 'को' को ग्रहण किया गया है। करण और अपादान कारक के लिए चार उपसर्ग थे—तें से और सें ती हिन्दी ने केवल 'से' को अपनाया गया है।

मानक या आदर्श का जो चयन होता है उसे समाज द्वारा, विशेषतः शिक्षित समाज द्वारा स्वीकृत होना चाहिए—बोलचाल में भी और लिखित में भी। लिखित रूप अधिक महत्त्वपूर्ण होता है क्योंकि इसमें समानता या एकरूपता का निर्वाह हो सकता है। 19वीं शताब्दी में हिन्दी में बहुत अधिक साहित्य नहीं था। इसलिए भाषा में एकरूपता नहीं लाई जा सकी और उसमें प्रयोगों की अनिश्चितता बराबर बनी रही। बीसवीं शताब्दी में जैसे-जैसे साहित्य की वृद्धि होती गई और ज्ञान-विज्ञान के लिए साहित्य का सृजन बढ़ता गया, वैसे-वैसे भाषा का मानक रूप निखरता गया।

मानकीकरण के सहायक बहुत से अन्य कई तरह के साधन हैं। सरकारी स्तर पर शासन और न्याय में व्यवहार की व्यापकता बहुत महत्त्वपूर्ण है। न्याय में शब्दों और अर्थों में अनिश्चितता नहीं रहती, नहीं तो वकील लोग बाल की खाल उतारकर रख देते हैं। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद से इस दिशा में विधायी आयोग और विधि मन्त्रालय के विधायी विभाग ने बहुत ठोस कार्य किया है। केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय ने नागरीलिपि और अंकों में एकरूपता लाने के लिए उपयोगी सुझार प्रसारित किये हैं। शिक्षा के क्षेत्र में विश्वविद्यालयों का योगदान भी स्तुत्य रहा है। हिन्दी प्रदेश के सभी विश्वविद्यालयों में हिन्दी ज्ञान-विज्ञान के नाना विषयों का माध्यम बनी है। वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयो ने विज्ञान, आयुर्विज्ञान, अभियान्त्रिकी, मानविकी आदि विश्वविद्यालयीय विषयों पर अनेक शब्दावलियों को प्रकाशित करके उच्चतम शिक्षा में हिन्दी के प्रयोग में भारी सहायता पहुँचाई है। अन्य स्रोतों में भी अनेक शब्दकोश प्रकाशित हुए हैं। इनके कारण उसमें एकरूपता भी आई है। एकरूपता मानकीकरम का आवश्यक लक्षण है।

ग़ैर सरकारी स्तर पर हिन्दी के मानकीकरण में सिनेमा, रेडियो, पत्र-पत्रिकाओं, छापेखानों और उनसे निकलने वाली ढेरों पुस्तकों ने बहुत सहायता पहुँचाई है। इनके माध्यम से हिन्दी का प्रचार हिन्दी के कोने-कोने तक हो गया है। दक्षिण में सिनेमा ने विशेषकर हिन्दी को प्रचलित किया है। हिन्दी संस्थाओं ने भी हिन्दी के प्रचार-प्रसार में अच्छा योगदान किया था। काशी नागरी प्रचारिणी सभा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, बिहार प्रचार परिषद् और दक्षिण भारत राष्ट्रभाषा प्रचार सभा ने इस शताब्दी के पूर्वार्द्ध में हिन्दी का सद्भावपूर्ण सार्वदेशिक प्रचार-प्रसार किया। कुछ धार्मिक संस्थाओं ने भी अपना योग दिया। ब्रह्म समाज और आर्य समाज का कार्य विशेषतः प्रचारात्मक रहा है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने सारे धार्मिक ग्रन्थ हिन्दी में लिखे। उनके अनुयायियों ने उन ग्रन्थों को पढ़ने के लिए हिन्दी सीखी और सिखाई। कई स्कूल और कालेज खुले। स्त्रियों में विशेषतः हिन्दी का बहुत प्रचार हुआ। इस व्यापक प्रचार के कारण हिन्दी के मानकीकरण की आवश्यकता अपने आप होती गई। क्योंकि भाषा के विस्तार के साथ उसकी एकरूपता आवश्यक हो जाती है।

भाषा के जितने प्रकार्य होते हैं उसका मानक रूप निखरता जाता है। व्यापार और वाणिज्य में, लोगों के निजी पत्र व्यवहार में, और अन्य क्षेत्रों में हिन्दी का व्यवहार जैसे-जैसे बढ़ा है, वैसे-वैसे उसका मानक रूप स्पष्ट होता गया है।

मानकीकरण की आवश्यकता

किसी भाषा में उच्चारण, वर्तनी, शब्दावली, व्याकरण और वाक्य-योजन का मानक रूप उसकी सम्पन्नता और व्यापकता का परमावश्यक तत्त्व है, यदि एक-एक शब्द को कई ढंग से लिखने की पद्धति चल पड़े तो उसको सीखने में भारी कठिनाई होती है।

मानक भाषा का प्रचार आसानी से हो सकता है क्योंकि ऐसी भाषा सहज और सरल हो जाती है।

यदि एक ही रचना में दो वाक्य उर्दू के हों, दो किसी बोली के हों और दो अंग्रेजी मिश्रित हिन्दी के हों तो उसके पढ़ने में या समझने में प्रभाव या सहजता कभी नहीं हो सकती जो एक रूप मानक भाषा में सम्भव है।

जिसे हम शुद्ध हिन्दी कहते हैं वह वास्तव में मानक हिन्दी ही है। ऐसे व्यक्ति को लोग सुसंस्कृत कहते हैं। अमानक भाषा स्तर भेद और जाति भेद पैदा करती है।

कुछ लोगों का विश्वास कि मानक भाषा के विकास से बोलियों का विकास रुक जाता है। परन्तु यह मात्र एक कल्पना है। बोलियाँ बनी रहती हैं और युग-युगान्तर से चली आ रही हैं। बोलियाँ भाषा के विकास में सहायक ही होती हैं क्योंकि देशी-विदेशी क्षेत्रों की अपेक्षा बोलियाँ भाषा के शब्द भंडार को भरने से अधिक उपयोगी होती हैं। हिन्दी बोलियों में विशेषकर भारी संख्या में सांस्कृतिक शब्द पड़े हैं, इनको ले लेने से हिन्दी के शब्दकोश में अभूतपूर्व सम्पन्नता आ सकती है।

बताया जाताहै कि मानक भाषा में कृत्रिमता आ जाती है परन्तु ऐसा तभी तक लगता है जब तक उस भाषा का व्यापक प्रसार नहीं हो जाता, इस दृष्टि से वह भाषा अवश्य कृत्रिम होती है कि वह शिक्षित वर्ग द्वारा संजोई जाती है, परन्तु शिक्षा के प्रचार के साथ जब वह एक विशाल समाज की भाषा बन जाती है तब उसकी कृत्रिमता कहाँ रह जाती है।

यह बात स्वीकार करने में संकोच नहीं है कि जब कालान्तर में मानक भाषा बोली से बहुत दूर होकर विच्छिन्न हो जाती है तो वह धीरे-धीरे निष्प्राण हो जाती है। संस्कृत का उदाहरण हमारे सामने है। वैयाकरणों ने उसे इतना कस कर बाँधा कि वह देववाणी होकर देवलोक को ही प्रस्थान कर गई, व्रजभाषा की भी यही गति हुई। मानकीकरण की प्रक्रिया कभी पूरी नहीं होती। यही कारण है कि जैसी समस्यायें भारतेन्दु युग के समय में शैलियों और प्रयोगों में थी, थोड़े-बहुत भिन्न रूप में लगभग वैसी ही बनी हुई है।

हिन्दी के मानक रूप का विकास

खड़ी बोली का परिनिष्ठित रूप बहुत धीरे-धीरे विकसित हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में फोर्ट विलियम कालेज के लेखकों की हिन्दी एवं भारतेन्दु-युग के साहित्यकारों की हिन्दी में कोई विशेष अन्तर नहीं है। जो अन्तर है, वह शैलियों का है। व्याकरण-सम्बन्धी बहुरूपता लिंग-वचन कारक प्रयोग में अस्थिस्ता, शब्दचयन की अनिश्चितता, वाक्ययोजन की शिथिलता एवं अन्वयहीनता, यह सब कुछ भारतेन्दु काल के बड़े-बड़े और अभ्यस्त लेखकों में भी मिलता है। महावीरप्रसाद द्विवेदी अनुभव किया कि भाषा की एकरूपता और परिनिष्ठिता के लिए एक तो क्षेत्रीय भाषाओं के प्रयोगों को छोड़ना पड़ेगा और दूसरे गद्य और पद्य की भाषा को एकरूप करना होगा।

साहित्य में खड़ी बोली के प्रयोग के बारे में जागरूकता लाने वाले भारतेन्दु के बाद मुजफ्फरपुर (बिहार) निवासी अयोध्याप्रसाद खत्री थे। वे प्रचलित भाषा को ठेठ हिन्दी कहते थे जिसमें न तो अरबी-फारसी के कठिन शब्द हों और न ही क्लिष्ट संस्कृत के शब्द हों। उनका दूसरा मत यह था कि गद्य के समान पद्य की भाषा भी खड़ी बोली होनी चाहिए। इसको उन्होंने आन्दोलन के रूप में उठाया और पद्य में व्रजभाषा को चलाये रखने का

घोर विरोध किया। राधाचरण गोस्वामी ने लिखा कि खड़ी बोली नीरस है, उसमें उत्तम छंदों का निर्वाह नहीं हो सकता, उसमें जो कविताएँ लिखी गई हैं उनमें कोई काव्यगुण नहीं है, इसलिए काव्य का माध्यम व्रजभाषा ही रहनी चाहिए।

इसलिए द्विवेदी जी और खड़ी बोली का पक्ष सबल रहा। अनेक कवि व्रजभाषा छोड़कर खड़ी बोली की ओर प्रवृत्त हुए। कुछ शुरू से केवल खड़ी बोली में लिखने लगे। गयाप्रसाद शुक्ल सनेही, अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध, भगवानदीन और विशेषतः मैथिलीशरम गुप्त ने भाषा को प्रतिष्ठित और परिष्कृत करने में अपना बहुमूल्य योगदान किया। छायावादी कवियों ने खड़ी बोली को सरल और काव्योपयुक्त बनाया। इसको परिनिष्ठित रूप देने में नागरी प्रचारिणी सभा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन और विश्वविद्यालयों के हिन्दी विभागों का बहुत हाथ है।

द्विवेदी युग का विशेष योगदान

द्विवेदी युग (1900-1920) हिन्दी भाषा के परिष्कार और सुधार का अतुलनीय युग था। युगनिर्माता एवं कर्णधार महावीरप्रसाद द्विवेदी ने खड़ी बोली हिन्दी के प्रत्येक अंग को गढ़ने-संवारने का कार्य बहुत लगन से किया ही, साथ ही अन्य भाषा-साधकों को भी इस कार्य में प्रवृत्त किया। वे सरस्वती में प्रकाशनार्थ आये लेखों का संशोधन स्वयं करते थे। द्विवेदी जी की धारणाओं और उपलब्धियों को संक्षेप में नीचे दिया जा रहा है—

1. **शब्द प्रयोग**—संस्कृत हो चाहे अरबी-फारसी और चाहे अंग्रेजी की, इनके जो शब्द प्रचलित हो गए हैं, उनका प्रयोग होना चाहिए क्योंकि वे अब हिन्दी के हो गए हैं। स्वाभाविक रूप से आगत ऐसे शब्दों के स्थान पर ज़बरदस्ती संस्कृत शब्दों को लाना वांछनीय नहीं है। यह आवश्यक नहीं है कि विदेशी शब्दों को उनके मूल रूप में अपनाया जाए। उनका उच्चारण और वर्तनी आदि हिन्दी के अनुरूप कर लेने में ही सुविधा होगी। यदि प्रचलित हिन्दी में अभिव्यक्ति के आग्रह से शब्द का अभाव हो, तो संस्कृत का आश्रय लेना ही होगा।

2. **व्याकरणिक प्रयोग**—द्विवेदी जी ने भाषा के मानकीकरण के लिए एक अच्छे व्याकरण की आवश्यकता का अनुभव किया। कुछ लोगों ने हिन्दी को व्याकरण के नियमों में जकड़ देने के सिद्धान्त का विरोध किया, परन्तु अधिकतर विचारकों ने नियमबद्धता को आवश्यक समझकर इसका अनुमोदन किया। द्विवेदी जी की प्रेरणा से कामताप्रसाद गुरु ने एक बृहद् व्याकरण लिख डाला।

(क) परसर्ग को संज्ञा से अलग लिखना चाहिए क्योंकि परसर्ग से पूर्व अव्यय आता हो तो परसर्ग को सटाकर लिखना सम्भव नहीं होता, जैसे—राम ने, राम ही ने सर्वनाम के सा परसर्ग को सटाकर लिखा जाये।

(ख) कुछ द्विविधि लिंगी शब्दों के विषय में चेष्टा रही है कि उनमें लिंग प्रयोग की एकरूपता हो। इस समय रूढ़िवादी लेखक अग्नि, आत्मा, मृत्यु आदि को संस्कृत पद्धति के अनुसार पुल्लिग मानते आ रहे थे, परन्तु शुद्ध हिन्दी वाले इन्हें स्त्रीलिंग मानते थे। इसी प्रकार उर्दूदान हिन्दी लेखक धर्मशाला, पाठशाला, चर्चा, माला, मर्यादा आदि शब्दों को पुल्लिग रूप में प्रयुक्त कर रहे थे। इन्हें स्त्रीलिंग मान लेने पर बल दिया गया क्योंकि अधिक प्रचलन ऐसा ही था।

(ग) पुल्लिग शब्दों के बहुवचन रूप सूरमे, राजे, देवते और स्त्रीलिंग शब्दों के लड़कियें, बातैं अप्रचलित माने गए और इनके स्थान पर सूरमा (एक सूरमा, चार सूरमा), राजा (एक राजा, तीन राजा), देवता, (मेरा देवता, मेरे देवता) मान्य हुए।

(घ) स्त्रीलिंग सम्बोधन में संस्कृत की तरह शकुन्तले ! सीते ! आदि प्रयोग रोके जाने लगे।

(ङ) सर्वनामों में इनने, उनने के साथ पर इन्होंने, उन्होंने को परिनिष्ठित किया गया। शेष कारकों में इन, उन चलते रहे, जैसे—इनको, उनको, इनसे, उनसे, इनका, के, की, उनमें, पर।

(च) यह वह के बहुवचन रूप ये वे लिखे जाने लगे।

(छ) जो...सो अथवा सो क्या आदि प्रयोग से 'सो' छूट गया और 'तो' आ गया।

(ज) लिखित भाषा में ध्यान दिया गया कि 'मैं' एकवचन के लिए और 'हम' बहुवचन के लिए की प्रयुक्त हो।

(झ) प्रयत्न किया गया कि केवल आकारान्त विशेषणों को विकारी माना जाए। संस्कृत की नकल में शेष प्रकार के विशेषणों का लिंग-वचन में रूपान्तर, न किया जाए।

(ट) क्रिया के आवैं, जावैं, हूजिए, लीजै, कीजै, दीजियो आदि प्रयोग छूटते गए।

(ट) तिस पर भी, कुछ दिन पीछे जैसे अन्यों को भी सुधार दिया गया।

(ठ) विरामादि चिह्नों के प्रयोग को भी व्यवस्थित किया गया।

स्वतंत्रता-प्राप्ति से तुरन्त पहले का युग

छायावादी युग (1920-1936) और प्रगतिवादी युग (1936-1950) में हिन्दी के मानकीकरण की दिशा में कोई आन्दोलनात्मक प्रयत्न नहीं हुआ, किन्तु भाषा का मानक रूप अपने-आप स्पष्ट होता गया। छायावादी कवियों विशेष्कर प्रसाद एवं पन्त ने संस्कृत पदावलियों को व्यावहारिक बनाकर हिन्दी की अभिव्यक्ति को काव्यमय और सशक्त बनाने में बहुत भारी काम किया और अन्तिम रूप से काव्य में व्रजभाषा के प्रयोग के दावे को समाप्त कर दिया। प्रेमचंद और उनके युग के कथाकारों ने कथासाहित्य के लिए एक सुनिश्चित शैली की स्थापना की जिसका प्रयोगवादी लेखकों ने अनुसरण किया। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जैसे निबन्धकारों ने हिन्दी को आलोचनात्मक विषयों के लिए उपयुक्त मनवाकर प्रतिष्ठित किया।

स्वतंत्रोपरांत

संविधान ने हिन्दी को राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित किया। हिन्दी के मानकीकरण पर नये सिरे से विचार-विमर्श होने लगा। देवनागरी लिपि को छपाई, टाइपराइटर, लिनोटाइप आदि के उपयुक्त बनाने के लिए सरकारी और गैरसरकारी स्तर पर विचार हुआ। शासन और शिक्षा में प्रयुक्त होने वाली पारिभाषिक शब्दावली का हिन्दी में सम्पादन होने लगा। केन्द्रीय सरकार ने एक स्थायी आयोग का संगठन किया। विश्वविद्यालयों के लिए पाठ्य पुस्तकें तैयार होने लगीं जिसमें उस शब्दावली का प्रयोग हुआ। विज्ञान के क्षेत्र में परिनिष्ठित या मानक हिन्दी की माँग। इन आवश्यकताओं की ओर राज्य सरकारों का ध्यान भी गया। सम्मेलन आयोजित किए गए, जिनमें हिन्दी के शब्दसमूह, लिपि, वर्तनी, व्याकरण तथा शैलियों को आधुनिक आवश्यकताओं के अनुरूप विकसित और स्थिर करने का प्रयास किया गया। इन विषयों पर दो संस्थाओं का विशेष योगदान है—एक केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय का और दूसरा प्रयोग विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के माध्यम से भारतीय हिन्दी परिषद् का। निदेशालय ने लिपि के मानकीकरण पर अधिक ध्यान दिया। वर्तनी के बारे में कारक-चिह्नों (परसर्गों) को संज्ञा से पृथक् और सर्वनामों के सटाकर लिखने का नियम निर्धारित किया; योजक चिह्न कहाँ-कहाँ लगाना चाहिए; अनुस्वार और अनुनासिक चिह्नों का प्रयोग किन स्थितियों में हो, इत्यादि कुछ मुद्दों पर बहस की गई।

1. अव्ययों को सदा पृथक् लिखना चाहिए। आह, ओह, अहा, हाय आदि विस्मयबोधक अव्यय, ही, तो, सो, भी, न, भर, मात्र, तक आदि निपात, अब, जब, कब, तब, यहाँ, वहाँ, जहाँ, कहाँ, सदा, क्या आदि क्रियाविशेषण; कि, किन्तु, अगर, यदि, मगर, लेकिन, परन्तु, चाहे, या, अथवा, तथा, और, यथा आदि

समुच्चयबोधक; एवं के बाहर, के भीतर, के नीचे, के ऊपर आदि सम्बन्धबोक अव्यय सदा अलग लिखे जाने चाहिए; जैसे—आह, यह क्या। राम अथवा श्याम।

समस्त पदों में प्रति, मात्र, यथा आदि अव्यय पृथक्, नहीं लिखे जाएँगे; जैसे—प्रतिदिन, प्रतिदान, यथासमय, यथासंभव, यथोचित।

2. जहाँ अर्धस्वर य व के स्थान पर स्वर का प्रयोग विकल्प से हो सकता हो, वहाँ स्वर का प्रयोग करना चाहिए; जैसे—किये-किए-लाये-लाए, नयी-नई में स्वरवाले शब्द किए, लाए, नई लिये जाएँ।

यह नियम क्रिया, विशेषण, अव्यय आदि सभी रूपों और स्थितियों में लागू माना जाए; जैसे—(क्रिया) दिखाए गए, आए हुए थे, नई दिल्ली, भलाई, चतुराई।

जहाँ य-श्रुति व्याकरणिक परिवर्तन से नहीं बनती, अर्थात् जहाँ विकल्प ही नहीं है, वहाँ स्वर नहीं होगा; जैसे—स्थायी, उत्तरदायी।

3. हिन्दी में कुछ शब्द ऐसे हैं जिनके दो-दो रूप बराबर चल रहे हैं। फिलहाल इनमें एकरूपता लाने की आवश्यकता नहीं समझी गई। कुछ उदाहरण—गरदन-गर्दन, गरमी-गर्मी, बिलकुल-बिल्कुल, कुरसी-कुर्सी, बरदाश्त-बर्दाश्त, वापिस-वापस, दोबारा-दुबारा, दूकान-दुकान, बीमारि-बिमारी, आदि। (नोट—इनमें दुकान, बीमारी ही शुद्ध हैं।)

4. संस्कृत शब्दों की वर्तनी को ज्यों-का-त्यों ग्रहण किया जाए। अतः ब्रह्मा को ब्रम्हा, चिह्न या चिन्ह, उऋण को उरिण में बदल देना उचित नहीं है। इसी प्रकार ग्रहीत, दृष्टा या दृष्टव्य, प्रदर्शिनी आदि अशुद्ध प्रयोग गाह्य नहीं हैं। गृहीत, द्रष्टा, द्रष्टव्य, प्रदर्शनी शुद्ध हैं।

भाषा के सर्वांगीण मानकीकरण का प्रश्न सबसे पहले (सन् 1950 में) इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग ने उठाया। डॉ धीरेन्द्र वर्मा की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई जिसमें डॉ ब्रजेश्वर वर्मा द्वारा 'हिन्दी व्याकरण', डॉ हरदेव बाहरी द्वारा 'वर्ण-विन्यास की समस्या', डॉ धीरेन्द्र वर्मा द्वारा 'देवनागरी लिपि-चिह्नों में एकरूपता' और डॉ माताप्रसाद गुप्त द्वारा 'हिन्दी शब्दभंडार का स्थिरीकरण' पर तैयार किए गए प्रतिवेदनों पर विचार-विमर्श हुआ। संक्षेप में इसके निष्कर्ष नीचे दिये जा रहे हैं—

वर्तनी का मानकीकरण

1. संस्कृत के तत्सम शब्दों की वर्तनी संस्कृत व्याकरण के नियमों के अनुरूप मान्य हो। संस्कृत शब्द सारे देश में सामान्यतः प्रचलित हैं। इन शब्दों का प्रमाणीकृत रूप ही शुद्ध है।

कोष्ठक में दिए गए रूप का निषेध किया जाये—

अगार (आगार)	बाह्य (वाह्य)
ईर्ष्या (ईर्षा)	बिभीषण (विभीषण)
उच्छ्वास (उछ्वास)	मंत्रिपरिषद् (मंत्रीपरिषद्)
औषध (औषधि)	भ्रातृजन (भ्राताजन)
एकत्र (एकत्रित)	महत्त्व (महत्व)
चिह्न (चिन्ह)	महारथ (महारथी)
छत्रच्छाया (छत्रछाया)	मिष्ठान्न (मिष्ठान)
ज्योतिष (ज्यौतिष)	व्यंग्य (व्यंग)
तत्त्व (तत्व)	सत्त्व (सत्व)
दुर्गन्ध (दुर्गन्धि)	सम्मुख (सन्मुख)

निरपराध (निरपराधी) सृजन (सर्जन)
बहिष्कार (वहिष्कार) हनुमान् (हनूमान)

(ख) रेफ के कारण जिन शब्दों में विकल्प से द्वित्व होता है, उनमें सरलता की दृष्टि से द्वित्व का निषेध किया जाये, जैसे

आर्य (आर्य्य) वर्मा (वर्म्मा)
कर्म (कर्म्म) शर्मा (शर्म्मा)

(ग) हल् चिह्न का कड़ाई से निर्वाह होना चाहिए; जैसे—

जगत् भगवान् परिषद् वाक्
जगत्पति महान् संसद् सम्राट्।

(घ) विसर्ग का प्रयोग भी संस्कृत की पद्धति के अनुसार रहना चाहिए; जैसे—

दुःख निःशंक, निःश्वास, प्रातः समरणीय।

(ङ) पंचमाक्षर के स्थान पर अनुस्वार लिखने की प्रथा हिन्दी में चल निकली है, भले ही संस्कृत में पंचमाक्षर ही शुद्ध हैं—

अङ्क, अंक, मञ्च, दण्ड, दंड, सम्बन्ध, संबंध।
गङ्गा, गंगा, ग्रन्थ, ग्रंथ, सन्त, संत, सम्भव, संभव।

2. (क) अरबी-फ़ारसी की क़, ख़, ग़, ज़, फ़ ध्वनियों का हिन्दीकरण क ख ग ज फ हो गया है।

(ख) हिन्दी के अपने अर्थात् तद्भव और देशी शब्दों की वर्तनी के बारे में कहा गया है कि गया, आया आदि में य है तो उनके बहुवचन या स्त्रीलिंग रूपों में भी य बना रहना चाहिए; जैसे गये, आये, गयी आयी। परन्तु अब बहुधा स्वीकार कर लिया गया है कि ए ई होना चाहिए। इसी तरह पंचमाक्षर को भी चलाने की सिफ़ारिश की गई है।

शब्दावली का मानकीकरण

शब्दावली के मानकीकरण की समस्या को पाँच स्तरों पर उठाया गया है—(1) लोकभाषा के शब्द, (2) साहित्यिक शब्द, (3) राष्ट्रभाषा या अखिल भारतीय स्तर के शब्द, (4) राजभाषा, की शब्दावली, और (5) अन्तर्राष्ट्रीय भाषा की शब्दावली

लोकभाषा में (अर्थात् बोलचाल में) शब्दों की पुनरुक्ति होती रहती है, परन्तु साहित्यिक भाषा पुनरुक्ति से बचने के लिए पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग करती है। कोई भी शब्द यदि कुछ ही देर में (लगातार) एक-दो अधिक बार आता है तो वह विदग्ध पाठकों को खटकता है इसलिए लेखक को पूर्ण पर्यायों की तलाश रहती है।

हिन्दी को सच्चे अर्थ में यदि राष्ट्रभाषा होना है तो उसे देश की अन्य भाषाओं से ऐसे शब्द ग्रहण करने होंगे जिनका हिन्दी में अभाव है; जैसे हमने दक्षिण की भाषाओं से इडली, डोसा, सांभर, मराठी से चालू, लागू आदि शब्द लिये हैं। संविधान की धारा 351 के अधीन हिन्दी का विकास भारत की भाषाओं से रूपशैली और प्रयोग ग्रहण करके करना है, शर्त यह है कि हिन्दी का आत्मा का साथ किसी प्रकार की छेड़-छाड़ न हो।

राजभाषा की शब्दावली का यह गुण होना चाहिए कि एक शब्द का विशिष्ट अर्थ हो, और एक अर्थ के लिए एक ही शब्द हो। मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश और बिहार में बहुत से शब्द भिन्न-भिन्न रूप में चल रहे हैं, यद्यपि उनका अर्थ एक है; जैसे—निदेशक, निर्देशक, संचालक (डाइरेक्टर), कार्यशाला, कर्मशाला, कार्यगोष्ठी (वर्कशाप), इत्यादि। विधि और शासन के क्षेत्र में पर्यायवाची शब्दों का कोई स्थान नहीं है।

हमारे शब्दकोशों में बेकार के शब्द पड़े हुए हैं क्योंकि अभी हिन्दी शब्दावली का मानकीकरण नहीं हो पाया। वायु के 49 पर्याय मिलते हैं, सूर्य के लिए भी इतने ही शब्द पाये जाते हैं। इसी प्रकार गो के 26 अर्थ दिये गये हैं। कुछ कोशों के नाम 'मानक हिन्दी कोश' हैं, परन्तु उसमें सैकड़ों हजारों अमानक शब्द और अमानक अर्थ मिल जाते हैं।

हिन्दी के मानकीकरण की समस्या उसकी शब्दावली के मानकीकरण की है।

व्याकरण

कारक पश्चिम में 'हमने जाना है' 'मैंने रुपए देने हैं', जैसे प्रयोग चलते हैं और पूर्व में 'हमको जाना है' मुझे रुपए देने हैं' 'हमें पानी पीना है' परन्तु पूर्वी प्रयोगों में संदेह बना रहता है, जैसे—'हम को सीता को गाड़ी में बिठाना है', 'हमको उसको रुपये देने हैं।' इसलिए पश्चिमी प्रयोग अधिक स्पष्ट है। पुरखे, पुरखों, पोते, पोतों तो ठीक है, परन्तु दादे, दादों, राजे, राजों नहीं। दादा, दादाओं, राजा, राजाओं ही चाहिए। माले, मालों, पाठशाले, पाठशालों नहीं, मालाएँ, मालाओं, पाठशालाएँ, पाठशालाओं मानक हैं।

वचन स्त्रीलिंग शब्दों के बहुवचन में द्विरूपता समाप्त हो रही है। कोष्ठक में दिए गए रूप अब अमानक हैं, जैसे—रोटियाँ (रोटिएँ), लड़कियाँ (लड़किएँ), चिड़ियाँ (चिड़िएँ), डिबियाँ (डिबिएँ)।

'चार बीघा खेत जोता' में सामूहिक अर्थ है। इसी तरह 'इसका दाम सौ रुपया है' में। परन्तु चार बीघे खेत जोता और 'इसके दाम सौ रुपये हैं' में गिनती करने का अर्थ है। दोनों रूप माने जाएँ।

सम्बोधन के लिए संज्ञा का बहुवचन रूप—भाइयों और बहनों अशुद्ध समझना चाहिए। ऐसे प्रयोग में अनुस्वार नहीं होना चाहिए।

लिंग आत्मा, वायु, मृत्यु, आयु, आदि संस्कृत के शब्द हिन्दी में स्त्रीलिंग हैं। आत्मा को कुछ लोग पुल्लिग रूप में प्रयुक्त करते हैं—यह ठीक नहीं। कुदाल, साइकिल, प्याज़, आलू, तौलिया का लिंग संदिग्ध बना हुआ है, इन्हें पुल्लिग मान लेना चाहिए।

पदनामों में लिंगभेद करने की आवश्यकता नहीं है—सचिवा, अध्यापिका, शिक्षिका, निदेशिका, अध्यक्षा, अधिकारिणी प्रयोग से बाहर हो गए हैं। मंत्री सचिव, अध्यापक, शिक्षक, निदेशक, अध्यक्ष, लेखापाल, अधिकारी आदि उभयलिंगी हैं।

क्रिया के प्रयोग के सम्बन्ध में कोई समस्या नहीं है। वाक्य में पुल्लिग और स्त्रीलिंग संज्ञाएँ एक-साथ आएँ, तो क्रिया का अन्वय किस रूप के साथ हो, इस सम्बन्ध में लेखकों में थोड़ी-बहुत अनिश्चितता पाई जाती है, परन्तु इसके नियम स्पष्ट हैं। वास्तव में लोग व्याकरण पढ़ने की चिन्ता नहीं करते।

निष्कर्ष

पिछले एक सौ वर्ष से हिन्दी भाषा के मानकीकरण की प्रक्रिया चल रही है परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से इसकी गति तेज हुई है और भाषा का बहुत-सारा स्वरूप मानक हो गया है। फिर भी कई मुद्दों में द्विरूपता शेष है। इसके निवारण के लिए भी कुछ नियम निर्धारित कर लिये गए हैं। संसार की बड़ी-बड़ी भाषाओं में भी प्रयोग की नितान्त एकरूपता नहीं है। इसके अलावा भाषा जब आगे बढ़ती है तो उसके सामने नयी समस्याएँ आ जाती हैं। यह सिलसिला कभी खत्म नहीं होता। हिन्दी में मानकीकरण के व्यावहारिक पक्ष में रेडियो, दूरदर्शन, पत्र-पत्रिकाओं और विद्यालयों के अध्यापकों के सहयोग की आवश्यकता है।

प्रश्न

1. मानकीकरण से क्या आशय है?
2. हिन्दी के मानक रूप के विकास पर प्रकाश डालिए।
3. हिन्दी के मानकीकरण की आवश्यकता समझाइए।

❑

अध्याय

15

मुहावरे

सामान्य परिचय—सामान्य रूप से **मुहावरा** शब्द का अर्थ है—अभ्यास, परन्तु विशेष अर्थ में मुहावरा उस वाक्यांश को कहते हैं, जो साधारण अर्थ के स्थान पर एक विशेष अलौकिक अर्थ को प्रकट करे। मुहावरे आकार में लघु होते हुए भी बड़े भाव या विचार को प्रकट करने की क्षमता रखते हैं।

भाषा को सजीव, प्रवाहपूर्ण और् सुगम्य बनाने के लिए मुहावरों का प्रयोग किया जाता है। उनके प्रयोग में इस बात की पूरी सावधानी रखना आवश्यक है कि उनका ठीक-ठीक भाव समझने के उपरान्त ही उनका प्रयोग किया जाना चाहिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

निर्देश—निम्न मुहावरों के नीचे चार वैकल्पिक अर्थ दिए गए हैं। उपर्युक्त अर्थ का चयन कीजिए—

1. *अंगार बरसना*
   (A) मुसीबत आना
   (B) भयंकर क्रोध करना
   (C) सूखा पड़ना
   (D) कड़ी धूप होना
2. अंग-अंग फूले ने समाना
   (A) सारा शरीर फूल जाना
   (B) अंगों में प्रफुल्लता होना
   (C) आनन्द-विभोर होना
   (D) मौज मनाना
3. अँगूठे चूमना
   (A) भूख मिटाना
   (B) चापलूसी करना
   (C) आगे-पीछे घूमना
   (D) सेवा करना
4. अंटी माना
   (A) चोरी करना
   (B) कम तौलना
   (C) चाल चलना, बाधा डालना
   (D) धोखा
5. अन्न को कन्न करना
   (A) नमकहरामी करना
   (B) झूठ बोलना
   (C) बनी बात को बिगाड़ना
   (D) धोखा देना
6. आँखों में फिरना
   (A) प्रेम होना
   (B) घृणा होना
   (C) किरकिरी की तरह कष्ट होना
   (D) बारम्बार याद आना
7. एक-एक की दस-दस करना
   (A) जुआ में जीतना
   (B) जादू दिखाना
   (C) सफेद झूठ बोलना
   (D) बातें बनाना
8. औघट घाट चलना
   (A) मूर्खता की बातें करना
   (B) गलत स्थान से नदी पार करना
   (C) धोखा देना

(D) सही रास्ता छोड़कर ऊट-पटाँग रास्ते से चलना

9. औघड़ होना
   (A) मूर्ख होना (B) पागल होना
   (C) सुधि-बुध न रहना (D) संन्यासी होना
10. कलम तोड़ना
   (A) गुस्सा आना (B) लिखने में असमर्थता दिखाना
   (C) बहुत अच्छा लिखना (D) कोरी शेखी मारना
11. कलेजा मुँह को आना
   (A) बहुत बीमार होना (B) घबड़ा जाना
   (C) अपनी बात कहने के लिए उत्सुक होना (D) बहुत ज्यादा खुश होना
12. काँटे से काँटा निकालना
   (A) ठीक इलाज करना (B) जैसे के साथ तैसा व्यवहार करना
   (C) चतुर होना (D) मूर्खता की बातें करना
13. केर-बेर का संग होना
   (A) समन्वय होना
   (B) गलत काम होना
   (C) विरुद्ध स्वभाव वालों का एक साथ मिलना
   (D) असम्भव काम होना
14. खरा खेल फर्रुखाबादी
   (A) सच्चा काम (B) फर्रुखाबाद में खेला जाने वाला एक खेल
   (C) धोखाधड़ी (D) कथनी और करनी में अन्तर
15. गाँठ का पलोथन लगाना
   (A) घाटे का व्यापार करना (B) पास से खर्च कर दूसरे का काम करना
   (C) मूर्ख बनना (D) दूसरों की सहायता करना
16. गिर पड़े का सौदा
   (A) भय के कारण कोई काम करना (B) विपरीत परिस्थितियों में पड़ जाना
   (C) हार मानना (D) विवशता के कारण कोई काम करना
17. गूँगे का गुड़
   (A) बेस्वाद वस्तु (B) मनमानी
   (C) अनुभव करके भी बता न सकना (D) अशुभ समाचार
18. घर-घर में माटी के चूल्हे होना
   (A) सब जगह क्लेश है (B) प्रत्येक परिवार में बँटवारा होता है
   (C) सब समान होना (D) मिट्टी का चूल्हा आसानी से बना लिया जाता है
19. जोंक लगना
   (A) खून चूसना (B) चिन्ता करना
   (C) कष्ट होना (D) पराई सम्पत्ति पर दृष्टि लगाना
20. दिन के फफोले तोड़ना
   (A) झूठी कल्पना करना (B) जली-कटी बातें कहना
   (C) दिल की दिल में रखना (D) असम्भव बातें सोचना

21. देवता कूच कर जाना
(A) देवता की झाँकी निकलना (B) देवता नाराज हो जाना
(C) अत्यन्त भयग्रस्त होना (D) नास्तिक हो जाना

22. पत्थर पर कमल जमाना
(A) निम्न कुल में श्रेष्ठ बालक का जन्म (B) तांत्रिक चमत्कार
(C) असम्भव बात होना (D) एक काव्योक्ति

23. पत्तल में छेद करना
(A) दोष निकालना (B) खाना न खाना
(C) खाना खत्म कर देना (D) भलाई के बदले बुराई करना

24. बावन तोले पाव रत्ती
(A) पूरा-अधूरा (B) बिल्कुल निकम्मा
(C) बिल्कुल ठीक (D) इनमें से कोई नहीं

25. भात सड़ना
(A) बिरादरी से निकालना (B) बासी भोजन
(C) आवश्यकता से अधिक भोजन तैयार होना (D) लापरवाह होना

26. म्याऊँ का ठौर पकड़ना
(A) खतरे में पड़ना (B) खतरा टालना
(C) चुप करा देना (D) अपनी बात बचाना

27. लँगोटी में फाग खेलना
(A) ब्रह्मचारी होना (B) दरिद्रता में आनन्द मनाना
(C) पहलवानी करना (D) व्यायाम करना

28. साँप-छछूँदर की हालत
(A) धोखाधड़ी का युद्ध (B) जन्मजात बैर
(C) बराबर वालों के मध्य शत्रुता (D) दुविधा की स्थिति

29. हिन्दी की चिंदी निकालना
(A) बात बनाना (B) बात की खोज करना
(C) हिन्दी की निन्दा करना (D) किसी बात में दोष निकालना

30. गजेन्द्र मोक्ष
(A) दुःख में निराश न होने वाला व्यक्ति (B) आस्तिक
(C) विपत्ति से छुटकारा पाना (D) नास्तिक

उत्तर

1. (D) 2. (C) 3. (B) 4. (C) 5. (C) 6. (D) 7. (C) 8. (D) 9. (C) 10. (C) 11. (B) 12. (B) 13. (C) 14. (A) 15. (B) 16. (D) 17. (C) 18. (C) 19. (A) 20. (B) 21. (C) 22. (C) 23. (D) 24. (C) 25. (A) 26. (A) 27. (B) 28. (D) 29. (B) 30. (C)

अध्याय 16

लोकोक्तियाँ

सामान्य परिचय—लोकोक्ति को कहावत भी कहा जाता है। 'कहावत' शब्द कथावत् से बना है, क्योंकि इनका प्रचलन किसी कथा, कहानी या घटना में निहित सत्य के आधार पर हुआ है। इनके प्रयोग से वाक्य अधिक युक्तिसंगत, प्रभावशाली एवं प्रामाणिक बन जाता है। इसी कारण वह लोक की उक्ति अथवा **लोकोक्ति** कही जाती है।

मुहावरा और लोकोक्ति के प्रयोग एवं प्रभाव बहुत कुछ समान होते हैं। इस कारण अनेक व्यक्ति इन दोनों के मध्य अन्तर नहीं कर पाते हैं और एक के स्थान पर दूसरे का नाम ले देते हैं।

मुहावरा और कहावत (लोकोक्ति) के मध्य मुख्य अन्तर यह होता है कि मुहावरा किसी वाक्य का अंश होता है और अलग से उसका कोई विशेष अर्थ नहीं होता है अर्थात् मुहावरा वाक्य में रहकर ही अपने अर्थ के चमत्कार को प्रकट करता है, परन्तु लोकोक्ति स्वतः पूर्ण रहती है और वह अलग से भी अपने साथ विशेष अर्थ अथवा संकेत को वहन करती है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

निर्देश—निम्न कहावतों में प्रत्येक के चार वैकल्पिक अर्थ दिए गए हैं। उपयुक्त अर्थ का चयन कीजिए—

1. अंधी पीसें कुत्ते खाएँ
   (A) अपना माल लुटाना
   (B) विवशता का अनुचित लाभ उठाना
   (C) असावधानी से किए जाने वाले कार्य द्वारा अयोग्य व्यक्ति व्यक्तियों को लाभ होता है
   (D) बेहिसाब काम करना
2. आपु न जावै सासुरे औरन कूँ सिख देत
   (A) स्वयं कोई काम न करना और उसको करने के लिए अन्य व्यक्तियों से कहना
   (B) दूसरों को उपदेश देना
   (C) किसी काम का आदमी न होना
   (D) अपने पिता के घर रहने वाली स्त्री
3. अशर्फियाँ लुटें और कोयलों पर छाप (मुहर)
   (A) लापरवाह होना
   (B) फिजूलखर्च करना
   (C) ठीक तरह हिसाब रखना
   (D) मूल्यवान वस्तुओं की ओर ध्यान न देकर साधारण वस्तुओं की चिन्ता करना
4. आग खाना अंगार निकलना
   (A) जैसा करोगे वैसा भरोगे
   (B) बबूल बोने पर आम के फल नहीं खाए जाते हैं
   (C) बुरा भोजन बुद्धि को खराब कर देता है
   (D) बुरी संगत बुरा कर्म
5. अनदेखा चोर राजा बराबर
   (A) जब तक किसी का पाप छिपा रहता है, तब तक वह पापी धर्मात्मा माना जाता है
   (B) बिना देखे किसी को चोरी कैसे लगाई जाए

(C) चोर अपने को साहूकार बताता है
(D) बिना चोरी करते देखे किसी को साहूकार ही कहना चाहिए

6. आगे नाथ न पीछे पगहा (जाके नाम को रोवें गधा)
(A) जिसके कोई रोने वाला न हो
(B) बिल्कुल निःसंग (अकेला)
(C) जिस पर कोई बन्धन न हो
(D) जो उद्दण्ड हो

7. इमली के पात पर बारात का डेरा
(A) कमाल दिखाना
(B) साधन थोड़े, बातें बड़ी
(C) असम्भव बात
(D) अत्यन्त कंजूस होना

8. ऊँट तो निगल लिया और दुम को हिचके
(A) गुड़ खाकर गुलगुलों से परहेज करना
(B) अधिक बड़ी मुसीबत को स्वीकार कर लेने के बाद साधारण बात के लिए संकोच करना/झिझकना
(C) सुकुमार होने का नाटक करना
(D) गुड़ खाकर गुलगुलों से परहेज करना

9. उतर गई लोई तो क्या करेगा कोई?
(A) साधनहीन व्यक्ति विवश हो जाता है
(B) बदनाम व्यक्ति को बुराई का क्या डर?
(C) नंगे व्यक्ति को किसी से भय नहीं लगता है
(D) बेशर्म का कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता है

10. ऊँट रे ऊँट तेरी कौनसी कल सीधी?
(A) सभी अवगुणों से युक्त
(B) प्रत्येक अंग टेढ़ा-मेढ़ा होना
(C) प्रत्येक अंग में जोड़ होना
(D) ऊट-पटांग होना

11. कनक धतूरे सों कहत, गहनों गढ़ो न जात
(A) नाम के आकर्षक होने से काम नहीं चलता है
(B) संसार काम चाहता है, नाम नहीं
(C) किसी के समान नाम रख लेने से उसके समान सम्मान नहीं मिलता है
(D) धतूरा सोने की भाँति उपयोगी नहीं होता है

12. कौआ भी हाड़ न ले जाएगा
(A) कोई दो कौड़ी को भी नहीं पूछेगा
(B) बहुत दूर पर रहोगे, तो कोई खबर भी नहीं लेगा
(C) सर्वथा अनुपयोगी होना
(D) कोई बात भी नहीं करेगा

13. कूद-कूद मछली बगुले को खाए
(A) कमजोर व्यक्ति शक्तिशाली को मारे
(B) फुर्तीला व्यक्ति सफलता प्राप्त करता है
(C) विपरीत कार्य होना
(D) अपनी गली में कुत्ता शेर होता है

14. कबीरदास की उल्टी बानी, बरसे कम्बल, भीजे पानी
(A) उल्टी बात कहना
(B) कबीरदास वर्षा में कम्बल ओढ़ लेते हैं

(C) कबीरदास की भाषा अटपटी है
(D) बिल्कुल उल्टा काम

15. का बरषा जब कृषी सुखाने/सुखानी
(A) अवसर निकल जाने पर सहायता से कोई लाभ नहीं होता
(B) देर से वर्षा आने पर कोई लाभ नहीं होता है
(C) देर से वर्षा आने के पहले ही खेत सूख जाते हैं
(D) खेत सूख जाने पर वर्षा का कौन स्वागत करता है

16. खरबूजे को देखकर खरबूजा रंग बदलता है
(A) पड़ोस का असर पड़ता ही है
(B) समूह में सब लोग परस्पर समान व्यवहार करते हैं
(C) एक खेत के सब खरबूजे समान होते हैं
(D) एक-दूसरे की नकल/स्पर्द्धा करना

17. खग जाने खग ही की भाषा
(A) आदमी पक्षियों को बोली समझ पाता है
(B) पक्षी की बोली समझने वाला व्यक्ति पक्षी होता है
(C) जो जिसके साथ रहता है, वही उसकी बात समझता है
(D) पक्षी की बात को समझने के लिए लोग पक्षी पालते हैं

18. गुड़ खाए गुलगुलों से परहेज
(A) ठीक तरह परहेज न करना
(B) कथनी और करनी में अन्तर होना
(C) ढोंग करना
(D) दोहरा व्यापार करना

19. घर आए नाग न पूजें, बामी पूजन जाएँ
(A) घर में साँप की पूजा नहीं करनी चाहिए
(B) लोग साँप न मिलने पर बामी की पूजा करते हैं
(C) अवसर से लाभ न उठाकर उसकी तलाश में परेशान करना
(D) बामी की पूजा करके साँप के पूजन के लाभ की आशा करना

20. घी खाया बाप ने सूँघो मेरे हाथ
(A) पिता की सम्पत्ति का अधिकारी होना
(B) दूसरों के श्रेष्ठ कार्य का स्वयं श्रेय लेना
(C) पिता के नाम पर यश कमाना
(D) पिता के अपराध के लिए खुद को दोषी मानना

21. घड़ी में घर जले, अढ़ाई घड़ी भद्रा
(A) काम को तुरन्त कर डालना चाहिए
(B) नुकसान के लिए क्षण भर का समय काफी है
(C) मुहूर्त-विचार काम को बिगाड़ देता है
(D) संकट को टालने के बजाए सूझ-बूझ से काम लेकर उसको दूर करना चाहिए

22. चाँदी देखे चादना, सुख देखे व्यवहार
(A) सम्पत्तिवान के सभी सगे होते हैं
(B) धनवान का सब आदर करते हैं
(C) सौन्दर्य पर सब रीझते हैं
(D) समस्त गुण धन के आश्रित रहते हैं

23. जो बोले सो किवाड़ खोले/जो बोले सो घी को जाए
(A) नेतृत्व करने वाले को अधिक श्रम करना पड़ता है
(B) अधिक बोलना ठीक नहीं रहता है
(C) जल्दी जगना ठीक नहीं है
(D) जग जाने पर चुपचाप पड़े रहना चाहिएं

24. तन पर नहीं लत्ता, पान खाए अलबत्ता
(A) बहुत अधिक शौकीन
(B) पान का शौकीन व्यक्ति

(C) गरीबी में खुश रहने वाला व्यक्ति (D) व्यर्थ का प्रदर्शन/घमण्ड

25. आठ कन्नौजिया नौ चूल्हा/तीन कन्नौजिया तेरह चूल्हा
(A) व्यर्थ का बखेड़ा/छुआछूत के कारण उत्पन्न भेदभाव
(B) परस्पर झगड़ा करना
(C) कन्नौजिया अतिथि के लिए एक अलग चूल्हा रखते हैं
(D) कन्नौजिया सदैव एक चूल्हा ज्यादा बनाते हैं

26. दमड़ी की हँडिया गई, कुत्ते की जाति पहचानी
(A) हँडिया लेकर भागना कुत्ते का स्वभाव होता है
(B) हाँडी लेकर भागने वाला कुत्ता कायर होता है
(C) छोटी सी वस्तु में ही किसी की बेईमानी/बुरी नीयत का पता लगना
(D) छोटी हाँडी को लेकर केवल कुत्ता भागता है

27. दस की लाठी एक का बोझ
(A) शोषण की प्रवृत्ति
(B) कई लोगों के सहयोग से कार्य अच्छी तरह से हो जाता है; जबकि एक आदमी के लिए वह कठिन हो जाता है
(C) मुर्दा ले जाना
(D) लाठी पर सामान लटकाना

28. नई नाइन बाँस का नैहन्ना/नई धोसन उपलों का तकिया
(A) नए शौक को पूरा करने के लिए अजीब तरह व्यवहार करना
(B) अनाड़ीपन या मूर्खता का काम करना
(C) अनुभवहीन व्यक्ति सदैव गलत काम करता है
(D) नया कारीगर अपना रोब जमाने के लिए प्रायः गलत काम कर बैठता है

29. पाव भर चून पुल पर रसोई
(A) अपनी सम्पत्ति का प्रदर्शन करना
(B) थोड़ी चीज को बहुत समझना
(C) अपनी चीज की बर्बादी करना
(D) सीमित साधन होने पर भी अधिक व्यक्तियों को नियन्त्रित कर देना

30. बीबी महल में, गला बाजार में
(A) लाज लिहाज छोड़ देना
(B) वेश्या का चरित्र
(C) बहुत जोर से बोलने वाली नारी
(D) महल में रहने वाली स्त्री का बाजार जाना चर्चा का विषय बन जाता है

31. बैल न कूदे, कूदे नंगी
(A) बछड़ा खूँटे के बल कूदता है
(B) सिर चढ़ा नौकर बहुत उछल-कूद करता है
(C) मुँह लगा नौकर सिर पर नहीं कूदेगा, तो और क्या करेगा?
(D) मालिक के बल पर नौकर की हिम्मत बढ़ना

32. भरी जवानी माझा ढीला
(A) जवान होते हुए पतंग न उड़ा सकना
(B) कच्ची डोर से पतंग ऊँची नहीं उड़ाई जाती है
(C) यौवन में ही स्वास्थ्य खराब हो जाना
(D) जवानी में ही निर्धन हो जाना

33. भुस में आग लगा जमालो दूर खड़ी
(A) कलह का बीज बोकर तटस्थ रहना
(B) भुस में आग लगने पर दूर खड़ा होना चाहिए
(C) भुस में आग लगने पर कोई भी उसके पास नहीं आता है
(D) मक्कार लोग आग लगाकर तमाशा देखते हैं

34. मेंढकी को जुकाम हो गया
(A) अयोग्य व्यक्ति द्वारा योग्यता का ढोंग
(B) प्रकृति का एक चमत्कार
(C) मेढकी को जुकाम होना वर्षा के आगमन का सूचक है
(D) बेसिर पैर की बात कहना

35. मुर्दे पर जैसे सौमन, वैसे हजार मन (जैसा सत्यानाश वैसा सवा सत्यानाश)
(A) मुसीबतों से क्या डरना
(B) मुसीबत कभी अकेली नहीं आती है
(C) मुसीबतें सहने वाला व्यक्ति
(D) दुःखी व्यक्ति पर और अधिक दुःख आ पड़ना

36. रुपया परखे बार-बार, आदमी परखे एक बार
(A) समझदार व्यक्ति रुपए को केवल एक बार परखता है
(B) बार-बार रुपया परखना समझदारी की पहचान है
(C) भले-बुरे आदमी की पहचान एक बार में हो जाती है
(D) रुपए और आदमी की पहचान करना बहुत कठिन है

37. लूट में चरखा नफा
(A) कोई विशेष लाभ न होना
(B) लूट-खसोट में बहुत कम माल हाथ लगता है
(C) लूट में मिलने वाला चरखा सौभाग्य सूचक होता है
(D) लूट में चरखा भी मुनाफा ही माना जाता है

38. शौकीन बुढ़िया चटाई का लहँगा
(A) बुढ़ापे में शौक ठीक नहीं
(B) शौक सोच-समझकर करना चाहिए
(C) अपात्र द्वारा कोई कार्य
(D) बुढ़ापे में चटाई का लहँगा ही ठीक रहता है

39. सब धान बाईस पसेरी/सबको एक लकड़ी से हाँकना
(A) अंधेरी नगरी की पहचान
(B) घोड़ा गधा एक भाव
(C) भेदभाव रहित समाज
(D) अच्छे-बुरे सबको एकसमान समझना

40. हाथी के दाँत दिखाने के और खाने के और
(A) असली वस्तु दिखाकर नकली वस्तु देना
(B) नम्बर दो का व्यापार करना
(C) दोहरा व्यवहार करना
(D) मीठी-मीठी बातें बनाकर किसी को धोखा देना

उत्तरमाला

1. (C) 2. (A) 3. (D) 4. (D) 5. (A) 6. (B) 7. (C) 8. (D) 9. (A) 10. (A) 11. (A) 12. (B) 13. (C) 14. (D) 15. (A) 16. (D) 17. (C) 18. (A) 19. (C) 20. (B) 21. (D) 22. (A) 23. (A) 24. (D) 25. (A) 26. (C) 27. (B) 28. (A) 29. (D) 30. (D) 31. (D) 32. (C) 33. (A) 34. (A) 35. (D) 36. (C) 37. (A) 38. (C) 39. (D) 40. (C)

❑

अध्याय

17

अनेक शब्दों के स्थान पर एक शब्द का प्रयोग

विषय प्रवेश—भाषा के सौष्ठव एवं प्रभाव में वृद्धि के हेतु अपनी बात को कम-से-कम शब्दों में कहना श्रेयस्कर होता है। इससे शैली में गम्भीरता एवं सूत्र रूप में कथन की विशेषता आ जाती है।

निर्देश—नीचे कुछ शब्द समूह दिए जाते हैं। इनको व्यक्त करने के लिए चार-चार वैकल्पिक शब्द दिए जा रहे हैं। उपयुक्त विकल्प का चयन कीजिए।

1. जो व्यक्ति हर काम में देर लगाता हो—
   (A) दीर्घ सूत्री (B) सुस्त (C) जाहिल (D) दीर्घकालक
2. अधिक श्रवण करने के पश्चात् जिसको ज्ञान की प्राप्ति हुई हो—
   (A) श्रावक (B) बहुश्रुत (C) जिज्ञासु (D) अनुसंधित्सु
3. जिसको अधिक बातें बनाना न आता हो—
   (A) वाचाल (B) मुनि (C) गम्भीर (D) रसज्ञ
4. वह स्त्री जिसके संतान न हो—
   (A) विधवा (B) अप्रसूता (C) बाँझ (D) कुलटा
5. जो केवल एक आँख वाला हो—
   (A) शुक्राचार्य (B) समदर्शी (C) एकाक्षी (D) अक्षविहीन
6. जिस पर विजय प्राप्त कर ली गई हो—
   (A) पराजित (B) आक्रांत (C) अजेय (D) विजित
7. बरसात के चार महीने—
   (A) पावस (B) वर्षा ऋतु (C) हरितमास (D) चातुरमास
8. हरेक बात में व्यर्थ टाँग अड़ाने वाला व्यक्ति—
   (A) लाल बुझक्कड़ (B) ज्ञानपाण्डेय
   (C) बतकटा (D) दालभात में मूसलचंद
9. जो गुण-दोष विवेचन करते हों—
   (A) समालोचक (B) छिद्रान्वेषी
   (C) नीर-क्षीर-विवेचक (D) सारग्राही
10. सूर्य के उदय होने का स्थान—
    (A) पूर्व दिशा (B) उदयाचल (C) मलय गिरि (D) गंधमादन
11. कनिष्ठा और मध्यमा के बीच की उँगली—
    (A) अनामिका (B) अंगुष्ठिका (C) अंगुलिका (D) संकेतिका
12. गुरु के समीप रहने वाला शिष्य—
    (A) अन्तेवासी (B) बटुक (C) शिष्य (D) गुरुपुत्र
13. वह स्थान जो पृथ्वी, चन्द्रमा, सूर्य आदि के मध्य में स्थित है—

(A) अन्तरिक्ष (B) क्षितिज (C) आकाश (D) द्यौलोक

14. वह अग्नि जो वन में अपने आप लग जाती है—

(A) वड़वाग्नि (B) जठराग्नि (C) दावानल (दावाग्नि) (D) पंचाग्नि

15. पाप को नष्ट करने के लिए किया गया शास्त्रानुमोदित कृत्य—

(A) काया-कल्प (B) प्रायश्चित (C) पाप यज्ञ (D) अभिमृत स्नान

16. वह काव्य जिसमें गद्य और पद्य दोनों का समावेश किया गया हो—

(A) नाट्य शासक (B) विष्कंभक (C) चम्पू (D) गद्य-पद्य

17. वह सायंकालीन बेला जब पशु वन से चरकर लौटते हैं—

(A) गोधूलि (B) सूर्यास्त (C) सायंबेला (D) पशु आगमन

18. वह स्त्री जो परपुरुष से प्रेम करे और उसे किसी पर प्रकट न होने दे—

(A) खण्डिता (B) परकीया (C) लक्षिता (D) गुप्ता

19. जो कष्ट से छुटकारा दिलाता है—

(A) कष्टहर (B) त्राता (C) उद्धारक (D) मुक्तिदाता

20. वह राजकीय धन जो किसान को सहायतार्थ दिया जाता है—

(A) अनुदान (B) तकाबी (C) लगान (D) अनुदान

21. भगवान विष्णु का भक्त—

(A) विष्णु भक्त (B) वैष्णव (C) श्रीपाद (D) गोस्वामी

22. जो युद्ध की इच्छा रखने वाला हो—

(A) युद्ध प्रेमी (B) युद्धवीर (C) युद्धजीवी (D) युयुत्सा

23. पृथ्वी और सूर्यादि लोकों के मध्य का स्थान—

(A) आकाश (B) स्वर्ग (C) द्युलोक (D) अन्तरिक्ष

24. वह रोग जिसका ठीक होना बहुत कठिन हो—

(A) अचिकित्सीय (B) घातक (C) असाध्य (D) मृत्युकारक

25. वह स्त्री जिसका पति दूसरा विवाह कर ले—

(A) अनूढा (B) खंडिता (C) अध्यूढा (D) परकीया

26. पैर से सिर तक—

(A) एड़ी-चोटी (B) नख-शिख (C) सर्वांग (D) आपादमस्तक

27. दो पर्वतों के बीच की भूमि—

(A) उपत्यका (B) घाटी (C) द्रोण (D) बेसिन

28. जिसे अपने कर्त्तव्य का ज्ञान न हो—

(A) अज्ञानी (B) बेसुध

(C) किंकर्तव्यविमूढ़ (D) कर्तव्यहीन

29. सर्वसाधारण को सूचित करने या जताने की क्रिया—

(A) सूचना (B) अधिसूचना (C) विज्ञप्ति (D) विज्ञापन

30. हिलोरें उत्पन्न करने वाला—

(A) हिलोरक (B) मंथनीय (C) आलोड़क (D) विलोड़क

31. बिना पलक गिराए—

(A) अपलक (B) निर्निमेष (C) निमिष (D) एकटक

32. दोनों भौहों का मध्यवर्ती स्थान—

(A) त्रिकुटी (B) त्रिपुटी (C) ब्रह्म-चक्र (D) ध्यान-स्थान

33. जिसको प्रसन्न करना कठिन हो—

(A) क्रोधी (B) दुराराध्य (C) दम्भी (D) आशुतोष

34. बहुश्रुत महिला—

(A) बुद्धिमती (B) शिक्षिता (C) सरस्वती (D) विदुषी

35. लुक-छिप कर प्रेमी के पास जाना—

(A) अत्याचार (B) अभिसार (C) व्यभिचार (D) अभिचार

उत्तरमाला

1. (A) 2. (B) 3. (C) 4. (C) 5. (C) 6. (D) 7. (D) 8. (D) 9. (A) 10. (B) 11. (C) 12. (A) 13. (A) 14. (C) 15. (B) 16. (C) 17. (A) 18. (D) 19. (A) 20. (B) 21. (B) 22. (D) 23. (D) 24. (C) 25. (C) 26. (D) 27. (C) 28. (C) 29. (C) 30. (C) 31. (B) 32. (A) 33. (B) 34. (D) 35. (B)

❑

अध्याय

18

पर्यायवाची शब्द

सामान्य परिचय

सामान्य परिचय—समान अर्थ वाले शब्दों को पर्यायवाची शब्द कहते हैं, पर्यायवाची शब्दों के अन्तर्गत तीन प्रकार के शब्द होते हैं, एक वे शब्द हैं, जो तत्सम शब्द हैं तथा जिनका प्रयोग परिष्कृत एवं प्रांजल शब्दावली के रूप में होता है, दूसरे प्रकार के ऐसे पर्यायवाची शब्द हैं जो अंग्रेजी, अरबी, फारसी, आदि विदेशी भाषाओं से गृहीत हैं तथा तीसरे वर्ग में वे शब्द आते हैं, तो तद्भव एवं देशज शब्दों से निर्मित हैं।

निर्देश—नीचे प्रत्येक शब्द के पर्यायवाची रूप चार विकल्पों के अन्तर्गत दिए गए हैं, इनमें से सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. अज
   (A) भेड़ (B) प्रारम्भ (C) पशु (D) ब्रह्म
2. अक्ष
   (A) चक्र (B) रथ (C) दिशा (D) संख्या
3. अंक
   (A) पारी (B) कंठ (C) शरीर (D) हिंदसा
4. काढ़ा
   (A) अकौआ (B) रस (C) पानी (D) निचोड़
5. सुरधुनी
   (A) गंगा (B) ध्रुव (C) नंदा (D) मन्दाकिनी
6. केतु
   (A) धूमकेतु (B) डंडा (C) पताका (D) नक्षत्र
7. कमल
   (A) पुष्प (B) कुसुम (C) पुंडरीक (D) प्रसून
8. यति
   (A) सती (B) संन्यासी (C) ब्राह्मण (D) भिखारी
9. ढाक
   (A) एक जंगली वृक्ष (B) रक्त पुष्प (C) सुपर्णी (D) किंशुक
10. ताल
    (A) ताड़ (B) तड़ाग (C) मिश्री (D) सरसी
11. द्विज
    (A) केश् (B) चन्द्रमा (C) नक्षत्र (D) दाँत
12. दिन
    (A) निशा (B) सूर्य (C) वासर (D) दिनमान
13. देवता
    (A) सुमना (B) विबुध (C) किंनर (D) वस्तु
14. धनुष
    (A) सारंग (B) इन्द्र (C) कोदंड (D) कपिश

15. जौहर
(A) विष (B) रत्न (C) माला (D) क्रोध

16. मोर
(A) केकी (B) कपोत (C) कुक्कुट (D) पिक

17. किरण
(A) मयूर (B) मयूख (C) चकवी (D) वारिज

18. हंस
(A) मराल (B) कपोत (C) सारंग (D) विवेकी

19. बाज
(A) श्येन (B) बाजी (C) हय (D) आशु

20. पान
(A) हरिभुख (B) ताम्बूल (C) हरिशृंगार (D) मुखशुद्धि

21. बिजली
(A) द्यौ (B) घनप्रिया (C) घनवास (D) सौदामिनी

22. महादेव
(A) पंचानन (B) बाघम्बरधारी (C) पिनाकी (D) चन्द्रशेखर

23. इन्द्राणी
(A) इन्दिरा (B) कमला (C) इन्द्रा (D) विधात्री

24. कस्तूरी
(A) कुमकुम (B) मृगमद (C) मलय (D) किंशुक

25. कबूतर
(A) पारावत (B) कीर (C) कुक्कुट (D) हारिल

26. जुगनू
(A) प्रकाशपुंज (B) चन्द्रप्रभा (C) खद्योत (D) वीरवधू

27. गाय
(A) खगेश्वरी (B) भद्रा (C) गोदी (D) पशुश्री

28. प्रतिहार
(A) सैनिक (B) नौकर (C) द्वारपाल (D) चौकीदार

29. दीप्ति
(A) कांति (B) जलन (C) झुलस (D) घबराहट

30. ईर्ष्यालु
(A) द्वेष (B) द्राही (C) प्रतियोगी (D) वैरी

उत्तरमाला

1. (D) 2. (A) 3. (C) 4. (D) 5. (A) 6. (C) 7. (C) 8. (B) 9. (D) 10. (B) 11. (B) 12. (C) 13. (B) 14. (A) 15. (B) 16. (A) 17. (B) 18. (A) 19. (A) 20. (B) 21. (D) 22. (C) 23. (C) 24. (B) 25. (A) 26. (C) 27. (B) 28. (C) 29. (A) 30. (B)

अध्याय

19

विलोम शब्द

समानार्थी शब्द की ही भाँति विपरीतार्थी शब्द होते हैं। अतः विपरीत अर्थ वाले शब्दों को लिखते समय यह स्मरणीय कि शब्द जिस वर्ग का हो (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि) उसका विपरीतार्थी शब्द भी उस वर्ग का हो।

निर्देश—नीचे कुछ शब्दों के विपरीतार्थी चार-चार शब्द दिए जा रहे हैं। इनमें एक शब्द सही विलोम शब्द है। उसका चयन कीजिए—

1. अनिवार्य
   (A) वैकल्पिक (B) आवश्यक (C) ऐच्छिक (D) पृष्ठांकित
2. स्थूल
   (A) पारलौकिक (B) सूक्ष्म (C) स्वल्प (D) अभौतिक
3. अचल
   (A) स्थिर (B) गतिशील (C) सचल (D) चेतन
4. अवनत
   (A) उन्नत (B) उत्कर्ष (C) उच्च (D) नत
5. अत्यधिक
   (A) स्वल्प (B) न्यून (C) तनिक (D) जरा सा
6. अगम
   (A) सरल (B) साधारण (C) सहल (D) सुगम
7. अवनि
   (A) आकाश (B) आसमान (C) अम्बर (D) नभ
8. अल्पज्ञ
   (A) सर्वज्ञ (B) विदुस (C) बहुज्ञ (D) बहुश्रुत
9. अधुनातन
   (A) प्राचीन (B) मूर्तकालिक (C) पुरातन (D) विगतकालीन
10. अंतरंग
    (A) बाहरी (B) बहिरंग (C) अप्राप्य (D) शत्रु
11. अपमान
    (A) मान (B) आदर (C) अभिनन्दन (D) सम्मान
12. अनुग्रह
    (A) विग्रह (B) पाना (C) लेना (D) स्वीकारना
13. अनागत
    (A) आगत (B) विगत (C) भूतकालिक (D) वर्तमान
14. अथ
    (A) समाप्त (B) पूर्व (C) इति (D) खत्म

15. अभिज्ञ
(A) अनभिज्ञ (B) अज्ञानी (C) मूर्ख (D) निपुणताहीन

16. अंत
(A) प्रारम्भ (B) श्रीगणेश (C) अथ (D) शुरू

17. अज्ञ
(A) विज्ञ (B) अनभिज्ञ (C) सर्वज्ञ (D) पारंगत

18. आशा
(A) दुराशा (B) निराशा (C) नाउम्मीदी (D) हताशा

19. अनुराग
(A) वैराग्य (B) विराग (C) वीतराग (D) अराग

20. उन्मूलन
(A) रोपण (B) विमूलन (C) उद्‌घाटन (D) शृंखलन

21. कुरूप
(A) सुरूप (B) सुन्दर (C) सुदर्शन (D) मनोहर

22. आवाहन
(A) प्रेषण (B) निराकरण (C) ग्रहण (D) विसर्जन

23. आघात
(A) अनाघात (B) साघात (C) पूर्व कथित (D) अनौपचारिक

24. अधित्यका
(A) वनत्यका (B) अभित्यका (C) उपत्यका (D) वनस्थली

25. अनन्त
(A) सांत (B) ससीम (C) अन्तरिक्ष (D) बाधित

26. जंगम
(A) स्थावर (B) सचल (C) अचल (D) जड़

27. कुलदीप
(A) कुलघोबा (B) कुलागार (C) कुलकलंक (D) निपूता

28. निंद्य
(A) स्तुत्य (B) वंद्य (C) प्रशंसनीय (D) आदरणीय

29. दुर्दान्त
(A) सहज (B) सरल (C) अहिंसक (D) शांत

30. आपत्ति
(A) विपत्ति (B) समृद्धि (C) सम्पत्ति (D) सुख

31. अभिसरण
(A) अपसरण (B) अनुकरण (C) अनुसरण (D) निराकरण

32. सकाम
(A) निकाम (B) निष्काम (C) अकाम (D) बेकाम

33. शोषक
(A) शोष्य (B) शोषणीय (C) पालक (D) पोषक

34. विरक्त

(A) भोगी (B) संसारी (C) आसक्त (D) लिप्त

35. मनुज

(A) दनुज (B) दैत्य (C) पिशाच (D) दानव

36. सन्निविष्ठन

(A) विश्लेषण (B) विनिष्ठन (C) संश्लेषण (D) निस्तारण

37. समावेशन

(A) निरभिवेशन (B) अधिवेशन (C) अनावेशन (D) बहिष्करण

38. नीरुजता

(A) रुजता (B) रुग्णता (C) नीरोगता (D) स्वास्थ्य

39. उपमान

(A) व्यतिरेक (B) उपमेय (C) अनन्वय (D) अतुल

40. उद्धत

(A) गम्भीर (B) विनत (C) सुशील (D) उद्दण्ड

उत्तरमाला

1. (A) 2. (B) 3. (C) 4. (A) 5. (A) 6. (D) 7. (C) 8. (C) 9. (C) 10. (B) 11. (A) 12. (A) 13. (B) 14. (C) 15. (A) 16. (A) 17. (A) 18. (B) 19. (B) 20. (A) 21. (A) 22. (D) 23. (A) 24. (C) 25. (A) 26. (A) 27. (B) 28. (B) 29. (C) 30. (C) 31. (A) 32. (B) 33. (D) 34. (C) 35. (A) 36. (D) 37. (C) 38. (B) 39. (A) 40. (B)

❑

अध्याय

20

वर्तनी-विचार

सामान्य परिचय—प्रभावशाली एवं शुद्ध भाषा के लिए शुद्ध वर्तनी का लिखना आवश्यक है। अशुद्ध वर्तनी के कारण भाषा का स्वरूप भी विकृत होता है एवं कभी-कभी अर्थ का अनर्थ भी हो जाता है।

निर्देश—यहाँ एक-एक शब्द की वर्तनी के तीन-तीन रूप दिए गए हैं। इनमें शुद्ध वर्तनी का चयन कीजिए—

1. (A) आशीर्वाद	(B) आशींवाद	(C) आषीर्वाद
2. (A) अध्येयता	(B) अध्येता	(C) अधेयता
3. (A) अद्यात्मिक	(B) आध्यात्मिक	(C) अध्यातमक
4. (A) अनुग्रहीत	(B) अनुग्रहित	(C) अनुगृहीत
5. (A) अन्तर्धान	(B) अंतरधान	(C) अंतरध्यान
6. (A) कृतघ्न	(B) कृतन्घ	(C) किरतघ्न
7. (A) आधीन	(B) अधीन	(C) अर्धीन
8. (A) गरिष्ट	(B) गरिष्ठ	(C) गरिष्ठय
9. (A) ऋषी	(B) रिषी	(C) ऋषि
10. (A) मखसूधन	(B) मधुसूदन	(C) मधसूदन
11. (A) क्लेश	(B) क्लेस	(C) क्लेष
12. (A) शुश्रूषा	(B) सुश्रूषा	(C) सुश्रुषा
13. (A) घनिष्ट	(B) घनिष्ठ	(C) घनिस्ट
14. (A) अर्ध	(B) अर्द्ध	(C) अरध
15. (A) गिरहण	(B) गृहण	(C) ग्रहण
16. (A) संवत	(B) संबत	(C) सम्वत
17. (A) औद्योगीकरण	(B) उद्योगीकरण	(C) ओद्योगीकरण
18. (A) निरोग	(B) नीरोग	(C) नगरो
19. (A) सन्यास	(B) संन्यास	(C) सनयास
20. (A) पूजनीय	(B) पूज्यनिय	(C) पूज्यनीय
21. (A) प्रदृर्शिनी	(B) प्रदर्शिनी	(C) प्रदिर्शिनी
22. (A) तात्कालिक	(B) तत्कालिक	(C) तात्कालीन
23. (A) प्रज्वलित	(B) प्रज्ज्वलित	(C) प्रजलित
24. (A) वारम्बार	(B) बारम्वार	(C) बारंबार
25. (A) शोडस	(B) सोड्स	(C) षोडश
26. (A) नृशंस	(B) नृसंस	(C) नृसंश
27. (A) व्योपार	(B) व्यापार	(C) व्यौपार

28. (A) जाग्रति (B) जागृति (C) जागरिति

29. (A) विषाद (B) विशाद (C) बिसाद

30. (A) आषाढ़ (B) आशाढ़ (C) आसाढ़

उत्तरमाला

1. (A) 2. (B) 3. (B) 4. (C) 5. (C) 6. (A) 7. (B) 8. (B) 9. (C) 10. (B) 11. (A) 12. (B) 13. (B) 14. (B) 15. (C) 16. (A) 17. (A) 18. (B) 19. (B) 20. (C) 21. (B) 22. (A) 23. (B) 24. (C) 25. (C) 26. (A) 27. (B) 28. (B) 29. (A) 30. (A)

अध्याय

21

तत्सम और तद्भव शब्द

हिन्दी के शब्द भण्डार में लगभग 50 प्रतिशत शब्द ऐसे हैं दो सीधे संस्कृत से आए हैं या उनके विकृत रूप (परिवर्तित रूप) ग्रहण कर लिए गए हैं। शब्दों के उक्त दो वर्गों को क्रमशः तत्सम शब्द और तद्भव शब्द कहा जाता है।

निर्देश

नीचे तत्सम और तद्भव शब्दों के जोड़े दिए जा रहे हैं। तत्सम शब्दों का चयन कीजिए—

1. (A) दुग्ध (B) दूध
2. (A) उन्मना (B) अनमना
3. (A) असीस (B) आशिष
4. (A) अकाज (B) अकार्य
5. (A) उक्षास (B) उच्छ्वास
6. (A) बिकार (B) विकार
7. (A) पोषण (B) पोसन
8. (A) ओष्ठ (B) होठ
9. (A) सर्प (B) साँप
10. (A) लोमड़ी (B) लोमश
11. (A) मातुल (B) मामा
12. (A) जाचक (B) याचक
13. (A) ज्योति (B) जोति
14. (A) जव (B) जौ
15. (A) भागनेय (B) भानजा
16. (A) निवाह (B) निर्वाह
17. (A) अजीर्ण (B) अजीरन
18. (A) जस (B) यश
19. (A) घरनी (B) गृहणी
20. (A) चतुष्पद (B) चौपाया
21. (A) पहर (B) प्रहर
22. (A) दुति (B) द्युति
23. (A) आदेश (B) आयसु

उत्तरमाला

1. (A) 2. (A) 3. (B) 4. (B) 5. (B) 6. (B) 7. (A) 8. (A) 9. (A) 10. (B) 11. (A) 12. (B) 13. (A) 14. (A) 15. (A) 16. (B) 17. (A) 18. (B) 19. (B) 20. (A) 21. (B) 22. (B) 23. (A)

❑

अध्याय

22

रचना एवं रचनाकार

निर्देश—प्रत्येक ग्रंथ के नाम के नीचे उसके रचयिताओं के चार विकल्प दिए गए हैं। सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. मृगावती
   (A) मंझन (B) कुतबन
   (C) मलिक मोहम्मद जायसी (D) उसमान
2. बीजक
   (A) तुलसीदास (B) रैदास
   (C) कबीरदास (D) सुन्दर दास
3. आल्हा खंड (आल्हा-ऊदल)
   (A) चन्दवरदाई (B) भूषण
   (C) जगनिक (D) मधुकर कवि
4. कनुप्रिया
   (A) धर्मवीर भारती (B) अज्ञेय
   (C) सर्वेश्वर दयाल सक्सेना (D) गिरिजा कुमार माथुर
5. साकेत
   (A) मैथिलीशरण गुप्त (B) हरिऔध
   (C) निराला (D) महादेवी शर्मा
6. रामचन्द्रिका
   (A) सूरदास (B) तुलसीदास
   (C) रामधारी सिंह दिनकर (D) केशवदास
7. दीप शिखा
   (A) सुमित्रानंदन पंत (B) महादेवी वर्मा
   (C) सोहन लाल द्विवेदी (D) जयशंकर प्रसाद
8. अनामिका
   (A) सुमित्रानन्दन पंत (B) जयशंकर प्रसाद
   (C) निराला (D) महादेवी वर्मा
9. गोदान
   (A) विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक (B) अमृतलाल नागर
   (C) प्रेमचंद (D) जयशंकर प्रसाद
10. मृगनयनी
    (A) वृन्दावन लाल वर्मा (B) इलाचन्द्र जोशी
    (C) भगवती प्रसाद वाजपेयी (D) भगवती चरण वर्मा

11. भारत दुर्दशा
(A) जयशंकर प्रसाद (B) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
(C) लक्ष्मी नारायण मिश्र (D) लक्ष्मी नारायण लाल

12. उसने कहा था
(A) बालकृष्ण भट्ट (B) जगमोहन सिंह नेगी
(C) चन्द्रधर शर्मा गुलेरी (D) रामचन्द्र शुक्ल

13. शेखर : एक जीवनी
(A) अज्ञेय (B) रांगेय राघव
(C) जैनेन्द्र (D) यशपाल

14. कब तक पुकारूँ
(A) वृन्दावन लाल वर्मा (B) रांगेय राघव
(C) जयशंकर प्रसाद (D) अमृतलाल नागर

15. अजातशत्रु
(A) लक्ष्मी नारायण मिश्र (B) उदयशंकर भट्ट
(C) जयशंकर प्रसाद (D) वृन्दावन लाल वर्मा

16. ब्रह्म राक्षस
(A) अज्ञेय (B) भारत भूषण अग्रवाल
(C) नागार्जुन (D) मुक्तिबोध

17. गर्म हवाएँ
(A) अज्ञेय (B) मुक्तिबोध
(C) सर्वेश्वर दयाल सक्सेना (D) भारत भूषण अग्रवाल

18. कागज के फूल
(A) भारत भूषण अग्रवाल (B) अज्ञेय
(C) मुक्तिबोध (D) नागार्जुन

19. आकाशदीप
(A) जयशंकर प्रसाद (B) प्रेमचंद
(C) कौशिक (D) यशपाल

20. विश्व शान्ति
(A) डॉ० राम विलास शर्मा (B) कीर्ति चौधरी
(C) कुँवर नारायण (D) मदन वात्सायन

21. पृथ्वी कल्प
(A) अश्क (B) धर्मवीर भारती
(C) गिरिजा कुमार माथुर (D) अजित कुमार

22. मेरी असफलताएँ
(A) गुलाबराय (B) बालकृष्ण भट्ट
(C) जे० पी० श्रीवास्तव (D) हरिशंकर परसाई

23. भ्रमर गीत
(A) कबीरदास (B) केशवदास
(C) तुलसीदास (D) सूरदास

24. पंचवटी
(A) हरिऔध (B) मैथिलीशरण गुप्त
(C) सूरदास (D) केशवदास

25. विनय पत्रिका
(A) कबीरदास (B) मोहनदास
(C) तुलसीदास (D) घनानंद

26. सूरसागर
(A) केशवदास (B) तुलसीदास
(C) सूरदास (D) बिहारीलाल

27. अशोक के फूल
(A) हजारी प्रसाद द्विवेदी (B) रामचन्द्र शुक्ल
(C) कुबेरनाथ (D) डॉ० नगेन्द्र

28. कादम्बरी
(A) कालिदास (B) बाणभट्ट
(C) भवभूति (D) विद्यापति

29. आचरण की सभ्यता
(A) रामचन्द्र शुक्ल (B) श्याम सुन्दरदास
(C) गुलाबराय (D) सरदार पूर्णसिंह

30. मधुशाला
(A) बच्चन (B) श्रीकृष्ण शर्मा
(C) नरेन्द्र शर्मा (D) अंचल

31. यामा
(A) मीराबाई (B) महादेवी वर्मा
(C) सुभद्राकुमारी चौहान (D) जयशंकर प्रसाद

32. पलाशवन
(A) नरेश मेहता (B) नरेन्द्र शर्मा
(C) बच्चन (D) नीरज

33. ठण्डा लोहा
(A) धर्मवीर भारती (B) अनन्त कुमार पाषाण
(C) नरेन्द्र शर्मा (D) नरेश मेहता

34. चाणक्य
(A) वृन्दावन लाल वर्मा (B) लक्ष्मीनारायण मिश्र
(C) डॉ० रामकुमार वर्मा (D) सत्यकेतु विद्यालंकार

35. अंधेर नगरी
(A) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (B) रामेश्वर शुक्ल अंचल
(C) सोम ठाकुर (D) नीरज

36. झाँसी की रानी (उपन्यास)
(A) वृन्दावन लाल वर्मा (B) रांगेय राघव
(C) अमृत लाल नागर (D) प्रेमचंद

37. झाँसी की रानी (कविता)
(A) महादेवी वर्मा (B) सुभद्रा कुमारी चौहान
(C) सोहन लाल द्विवेदी (D) बालकृष्ण शर्मा नवीन

38. बाणभट्ट की आत्मकथा
(A) बच्चन (B) वृन्दावन लाल वर्मा
(C) हजारी प्रसाद द्विवेदी (D) डॉ० राम विलास शर्मा

39. महाभारत
(A) वाल्मीकि (B) वेदव्यास
(C) भगवान श्रीकृष्ण (D) कबीरदास

40. प्रगति और परम्परा
(A) मुक्तिबोध (B) नागार्जुन
(C) डॉ० नामवर सिंह (D) डॉ० रामविलास शर्मा

41. कुकुरमुत्ता
(A) निराला (B) अंचल
(C) नागार्जुन (D) दिनकर

42. लोकायन
(A) सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला (B) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
(C) सुमित्रानंदन पंत (D) मुक्तिबोध

43. रश्मिरथी
(A) दिनकर (B) धर्मवीर भारती
(C) राम प्रसाद त्रिपाठी (D) पद्मकान्त मालवीय

44. साहित्य दर्पण
(A) मम्मट (B) दण्डी
(C) विश्वनाथ (D) पंडितराज जगन्नाथ

45. आखिरी कलाम
(A) प्रेमचन्द (B) मलिक मोहम्मद जायसी
(C) रसखान (D) प्रताप नारायण मिश्र

उत्तरमाला

1. (A) 2. (C) 3. (C) 4. (A) 5. (A) 6. (D) 7. (B) 8. (C) 9. (C) 10. (A) 11. (B) 12. (C) 13. (A) 14. (B) 15. (C) 16. (D) 17. (C) 18. (A) 19. (A) 20. (A) 21. (C) 22. (A) 23. (D) 24. (B) 25. (C) 26. (C) 27. (A) 28. (B) 29. (D) 30. (A) 31. (B) 32. (B) 33. (A) 34. (D) 35. (A) 36. (A) 37. (B) 38. (C) 39. (B) 40. (D) 41. (A) 42. (C) 43. (A) 44. (C) 45. (B)

अध्याय

23

कवियों की उक्तियाँ

1. ऊधौ मन न भये दस बीस।
   (A) नंददास (B) सूरदास
   (C) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (D) मैथिलीशरण गुप्त
2. कनक कनक तें सौ गुनी मादकता अधिकाय।
   (A) तुलसीदास (B) रहीम
   (C) बिहारी (D) रामनरेश त्रिपाठी
3. जहाँ सुमति तहाँ सम्पत्ति नाना।
   जहाँ कुमति तहाँ विपति निदाना।।
   (A) जायसी (B) तुलसीदास
   (C) मैथिलीशरण गुप्त (D) रामनरेश त्रिपाठी
4. वही मनुष्य है जो मनुष्य के लिए मरे।
   (A) जगदम्बा प्रसाद 'हितैषी' (B) सियारामशरण गुप्त
   (C) मैथिलीशरण गुप्त (D) रामधारी सिंह 'दिनकर'
5. पानी गये न ऊबरे मोती, मानुष चून।
   (A) बिहारी (B) रहीम
   (C) कवि गिरिधर (D) दुलारे लाल
6. बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी।
   खूब लड़ी मरदानी वह तो झाँसी-वाली रानी थी।।
   (A) रामधारी सिंह 'दिनकर' (B) सुभद्रा कुमारी चौहान
   (C) श्याम नारायण पाण्डेय (D) सोहनलाल द्विवेदी
7. एक थाल मोती से भरा। सबके सिर पर औंधा धरा।
   चारों ओर वह थाली फिरे। मोती उससे एक न गिरा।।
   (A) अमीर खुसरो (B) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
   (C) कबीरदास (D) अग्रदास
8. मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरा न कोई।
   (A) मीराबाई (B) सूरदास
   (C) ताजबीवी (D) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
9. बारह बरिस लै कूकर जीएँ, और तेरह लौं जिएँ सियार।
   बरिस अठारह छत्री जीएँ, आगे जीवन को धिक्कार।।
   (A) चन्दबरदाई (B) कबीर
   (C) जगनिक (D) श्रीधर
10. गुरु गोविन्द दोनों खड़े काके लागूँ पाँय।
    बलिहारी गुरु आपने गोविंद दियो बताय।।

(A) तुलसीदास (B) कबीरदास
(C) सूरदास (D) रहीम

11. ऊधौ ब्रह्म ज्ञान को बखान करते न नेंकु, देखे लेते कान्ह जो हमारी अंखियान, ते।
(A) महाकवि देव (B) जगन्नाथ दास रत्नाकर
(C) घनानंद (D) कृष्णदास

12. अजगर करै न चाकरी पंक्षी करै न काम।
दास मलूका कहि गए, सबके दाता राम।।
(A) कबीरदास (B) रैदास
(C) मलूकदास (D) सुन्दरदास

13. गहना एक कनक तें गहना, इन महं भाव न दूजा।
कहन सुनन को दुह करि थापिन, इक निमाज इक पूजा।।
(A) बिहारी (B) दादूदयाल
(C) कबीरदास (D) सुन्दरदास

14. अमिय हलाहल मद भरे स्वेत स्याम रतनार।
जियत मरत झुक झुक परत जेहि चितवत इक बार।।
(A) बोधा (B) आलम
(C) रसलीन (D) बिहारी लाल

15. नहिं पराग नहिं मधुरमधु, नहिं विकास यदि काल।
अली कली ही सौं बँध्यो, आगे कौन हवाल।।
(A) पद्माकर (B) भूषण
(C) रहीम (D) बिहारी लाल

16. नैनन में जे सदा रहते तिनकी अब कान कहानी सुन्यो करै
(A) मतिराम (B) पद्माकर
(C) आलम (D) शेखनवी

17. मुड़े तोड़ लेना वनमाली देना तुम उस पथ में फेंक।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक।।
(A) माखन लाल चतुर्वेदी (B) बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'
(C) सोहनलाल द्विवेदी (D) बलवीर सिंह 'रंग'

18. श्वानों को मिलता दूध-वस्त्र भूखे बालक अकुलाते हैं।
(A) सुमित्रानंदन पंत (B) सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला
(C) रामधारी सिंह 'दिनकर' (D) जगदम्बा प्रसाद हितैषी

19. राम! तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है।
कोई कवि बन जाए सहज सम्भाव्य है।।
(A) हरिऔध (B) मैथिलीशरण गुप्त
(C) वियोगी हरि (D) सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला

20. निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल।
बिनु निज भाषा-ज्ञान के मिटै न हिय को सूल।।
(A) वियोगी हरि (B) प्रतापनारायण मिश्र
(C) प्रेमघन (D) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

21. कबहूँ बा सुजान के आँगन माहिं मो अँसुवान को लै बरसौ।

(A) देव (B) मीरन
(C) घनानंद (D) बोधा

22. नयी बीबी पाकर आदमी अंधा हो जाता है
(A) यशपाल (B) प्रेमचंद
(C) जैनेन्द्र (D) चतुरसेन शास्त्री

23. पक्षी चाहत है मैं बादल होता, बादल चाहता है मैं पक्षी होता।
(A) रबीन्द्रनाथ टैगोर (B) बंकिमचंद
(C) शरतचंद (D) जयशंकर प्रसाद

24. धीरे-धीरे कुछ नहीं मिलता सिर्फ मौत मिलती है।
(A) गजानन माधव मुक्तिबोध (B) सर्वेश्वर दयाल सक्सेना
(C) भारत भूषण अग्रवाल (D) केदार नाथ सिंह

25. अधिकार खोकर बैठ रहना यह महा दुष्कर्म है।
(A) सोहनलाल द्विवेदी (B) माखनलाल चतुर्वेदी
(C) बालकृष्ण शर्मा नवीन (D) मैथिलीशरण गुप्त

उत्तरमाला

1. (B) 2. (C) 3. (B) 4. (C) 5. (B) 6. (B) 7. (A) 8. (A) 9. (C) 10. (B) 11. (B) 12. (C) 13. (C) 14. (D) 15. (D) 16. (C) 17. (A) 18. (C) 19. (B) 20. (D) 21. (C) 22. (B) 23. (A) 24. (B) 25. (D)

❑

अध्याय

24

अलंकार

सामान्य परिचय—अलंकार का शब्दार्थ होता है—आभूषण या गहना। आभूषण द्वारा शरीर को सजाया जाता है जिससे वह अधिक आकर्षक प्रतीत हो। शोभा को बढ़ाने वाले रस, भाव, आदि के उपकारक, जो शब्द और अर्थ के लिए अस्थिर धर्म हैं, वे बाजूबंद आदि (गहनों) की तरह अलंकार कहते हैं।

आचार्य केशवदास ने तो अलंकार को काव्य की आत्मा, काव्य का सर्वस्व ही माना है, यथा—

जदपि सुजाति सुलच्छनी, सुबरन, सरस, सुवृत्त।
भूषण बिनु न बिराजई, कविता, वनिता, मित्त।।

प्रमुख अलंकार

अनुप्रास—जब एक ही अक्षर या कई व्यंजन वर्ण एक वाक्य में एक से अधिक बार आएँ तब अनुप्रास होता है, उदाहरण—

मंद मंद चढ़ि चल्यौ चैत्र निसि चन्द्र चारू
मंद मंद चाँदनी पसारत लतन तें।

यहाँ 'च' व्यंजन की आवृत्ति होने से '**अनुप्रास**' अलंकार है।

यमक—जब शब्दों या वाक्यांशों की आवृत्ति एक से अधिक बार होती है, लेकिन उनके अर्थ सर्वत्र भिन्न होते हैं, वहाँ **यमक** अलंकार होता है; यथा—जीवन-दायक हैं घन के सम, जीवन-जीवन में धनश्याम हैं। यहाँ प्रथम **जीवन** का अर्थ जल है एवं द्वितीय-तृतीय का अर्थ प्राण-प्राण है। अतः यहाँ **यमक** अलंकार है।

पुनरुक्ति प्रकाश—जहाँ एक ही शब्द दो या इससे अधिक बार होता है और ऐसा होने से ही अर्थ में रुचिरता बढ़ जाती है, वहाँ **पुनरुक्ति प्रकाश** अलंकार होता है। यथा—थीं **ठौर-ठौर** विहार करतीं सुन्दरी सुर-नारियाँ।

वीप्सा-पुनरुक्ति प्रकाश की भाँति **वीप्सा** में भी शब्द बार-बार आते हैं, किन्तु वे आदर, उत्साह, आश्चर्य, शोक, घृणा आदि मन के विकारों को सूचित करने के लिए आते हैं—छिः छिः!, राम, राम! आदि के प्रयोग के समय वीप्सा अलंकार होता है—राम! राम! यह मौत बहुत बुरी हुई।

श्लेष—जब एक शब्द के दो या अधिक अर्थ निकलते हैं तब श्लेष अलंकार होता है।

'श्लेष' का शब्दार्थ **चिपका हुआ** होता है। एक शब्द में एक से अधिक अर्थ चिपके होने की स्थिति में *श्लेष अलंकार होता है। उदाहरणतः*

रावण सिर-सरोज-वनचारी। चलि रघुवीर-सिलीमुख धारी।

सिलीमुख के अर्थ—(1) बाण, (2) भौंरा

जब शब्द की आवृत्ति हो और प्रत्येक बार भिन्न अर्थ हो, तब यमक; जब एक ही शब्द के एक से अर्थ हों, तो श्लेष अलंकार होता है।

उपमा—जब हम किसी वस्तु का वर्णन करके उससे अधिक प्रसिद्ध किसी वस्तु से उसकी समानता करते हैं, तब **उपमा** अलंकार होता है। समता दो वस्तुओं के रूप, रंग और गुण में की जाती है। **उदाहरण**—रानी रति के समान सुन्दरी है।

अनन्वय—जब उपमेय की समता देने के लिए कोई उपमान होता ही नहीं और कहा जाता है कि 'उसके समान वही है' तब अनन्वय अलंकार होता है। अनन्वय को अननन्वयोपमा भी कहते हैं। **उदाहरण**—राम से राम, सिया सी सिया।

प्रतीप—जब उपमेय और उपमान में विपर्यय किया जाए, तब **प्रतीप** अलंकार होता है। **प्रतीप** का अर्थ उल्टा होता है।

उदाहरण—नेत्र के समान कमल है।

गर्व करउ रघुनन्दन जिन मन माँह।

देखहु आपनि मूरति सिय कै छाँह।।

व्यतिरेक—जब उपमेय को उपमान से बढ़ाकर अथवा उपमान को उपमेय से घटाकर वर्णन किया जाता है, तब व्यतिरेक अलंकार होता है।

उदाहरण—सीता का मुख कमल के समान कहा जाता है, लेकिन कमल तो राम में कुम्हला जाता है, और दिन-रात खिला रहता है।

रूपक—जहाँ एक वस्तु (उपमेय) को दूसरी वस्तु (उपमान) के रूप में दिखाया जाए, वहाँ **रूपक** अलंकार होता है।

उदाहरण—ऊधो, मेरा **हृदय तल** था एक **उद्यान** न्यारा।

शोभा देतीं अमित उसमें **कल्पना-क्यारियाँ** थीं।।

उत्प्रेक्षा—जब उपमेय को उपमान भिन्न जानते हुए भी, उसमें उपमान की सम्भावना की जाती है, तब **उत्प्रेक्षा** अलंकार होता है। मनु, मनहुँ, मानो, जनु, जानहु, जानो, निश्चय, मेरे जान, इव, ये अथवा इनके पर्यायवाची शब्द **उत्प्रेक्षा** के वाचक शब्द हैं।

भ्रांतिमान (भ्रम)—कभी-कभी किसी वस्तु को देखकर उसमें अन्य किसी वस्तु से कुछ सादृश्य के कारण हम उसे अन्य वस्तु समझ बैठते हैं, पर वह वास्तव में, अन्य वस्तु होती नहीं। ऐसी भूल भ्रम या भ्रान्ति कहलाती है। जब इस प्रकार की भ्रांति का वर्णन किया जाता है, तब भ्रांतिमान अलंकार होता है।

जब उपमेय में उपमान का आभास हो, तब **भ्रम या भ्रान्तिमान** अलंकार होता है।

उदाहरण—नाच अचानक ही उठे बिनु पावस बन मोर।

जानत हों नन्दित करी यह दिसि नंद किसोर।

संदेह—जब उपमेय और उपमान में समता देखकर यह निश्चय नहीं हो पाता है कि उपमान वास्तव में उपमेय है, या नहीं, दुविधा बनी रहती है, तब **संदेह** अलंकार होता है।

उल्लेख—जब एक वस्तु का वर्णन (उल्लेख) कई प्रकार से किया जाए, तब **उल्लेख** अलंकार होता है।

उदाहरण—जिनकी रही भावना जैसी।

प्रभु-मूरति देखी तिन तैसी।।

रूपकातिश्योक्ति—जब उपमेय और उपमान में इतना अभेद स्थापित किया जाता है कि उपमेय का अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है, केवल उपमान द्वारा उसका बोध होता है, तब **रूपकातिश्योक्ति** अलंकार होता है।

उदाहरण— हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी।
तुम्ह देखी सीता मृगनैनी।
खंजन सुक कपोत मृग मीना।
मधुपनिकर कोकिला प्रबीना।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

निर्देश—नीचे पद्यांशों के कुछ उद्धरण दिए गये हैं। प्रत्येक में प्रयुक्त अलंकार के चार विकल्प दिए गए हैं। सही विकल्प का चयन करना है—

1. लाल देह लाली लसै, अरु धरि लाल लंगूर।
वज्र देह दानव-दलन, जय-जय जय कपिसूर।

(A) अनुप्रास (B) यमक
(C) रूपकातिश्योक्ति (D) पुनरुक्ति प्रकाश

2. लाली मेरे लाल की, जित देखूँ तित लाल
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल।

(A) यमक (B) तद्गुण
(C) उपमा (D) मीलित

3. मेरी मन अनत कहाँ सुख पावै
जैसे उड़ि जहाज को पंक्षी फिरि जहाज पै आवै।

(A) उपमा (B) श्लेष
(C) उदाहरण (D) रूपक

4. नील परिधान बीच सुकुमार, खुल रहा मृदुल अधखिला अंग।
खिलो हो ज्यों बिजली का फूल, मेघ बन बीच गुलाबी रंग।

(A) रूपक (B) उपमा
(C) उत्प्रेक्षा (D) अतिश्योक्ति

5. तू रूप है किरण में, सौन्दर्य है सुमन में।
तू प्राण है पवन में, विस्तार है गगन में।

(A) रूपक (B) उल्लेख
(C) अतिश्योक्ति (D) तद्गुण

6. किधौं सूर को सर लग्यौ, किधौं सूर की पीर।
किधौं सूर को सर लग्यौ, तन मन धुनत सरीर।
(A) सन्देह (B) भ्रान्तिमान
(C) विभावना (D) यथासंख्य

7. कनक-कनक तें सौ गुनी मादकता अधिकाय।
या खाए बौरात नर, वा पाये बौराय।
(A) रूपक (B) श्लेष
(C) असंगति (D) यमक

8. जो रहीम कुलदीप की, कुल कपूत की सोय।
बारे उजियारो करै, बढ़ै अंधेरो होय।
(A) यमक (B) श्लेष
(C) उपमा (D) दृष्टान्त

9. डरे कुटिल नृप प्रभुहिं निहारी, मनहुँ भयानक मूरति भारी।
(A) अतिश्योक्ति (B) उत्प्रेक्षा
(C) श्लेष (D) उपमा

10. हैं गर्जत घन नहीं, बजते नगाड़े।
विद्युल्लता चमकी न, कृपाण जाल से।
(A) उपमा (B) उत्प्रेक्षा
(C) अपह्नुति (D) रूपक

11. दायाँ हाथ लिए था सुरभित चित्र विचित्र सुमनमाला।
टाँगा धनुष कि काम-लता पर मनसिज ने झूला डाला।
(A) संदेह (B) भ्रान्तिमान
(C) उपमा (D) रूपक

12. क्यारी करै कपूर की, मृगमद विरवा बंध।
सर्वसुधा सींचे तऊ, हींग न होय सुगंध।
(A) अतिश्योक्ति (B) अतद्गुण
(C) विभावना (D) विषम

13. सरद चाँदनी में प्रकट होय न तिय के अंग।
सुनत मंजु मंजीर ध्वनि, सखी न छाँडत संग।
(A) मीलित (B) उन्मीलित
(C) तद्गुण (D) भ्रान्तिमान

14. दया की जल-धारा बरसा कर भूतल पर,
घनश्याम राम ताप शांत कर देवेंगे।

(A) परिकरांकुर (B) विरोधाभास

(C) परिकर (D) अन्योक्ति

15. काले कुत्सित कील का कुसुम में कोई नहीं काम था।
काटे से कमनीयता कमल में क्या है न कोई कमी?
घनश्याम राम ताप शांत कर देवेंगे।

(A) परिकट (B) विषम

(C) रूपक (D) असंगति

उत्तरमाला

1. (A) 2. (B) 3. (A) 4. (C) 5. (C) 6. (A) 7. (D) 8. (B) 9. (B) 10. (C) 11. (A) 12. (B) 13. (B) 14. (C) 15. (B)

❑